RNI No. 7127/60

डाक पंजीयन संख्या - Jaipur City / 411 2023-25

संघशक्ति

मासिक समाचार पत्रिका

वर्ष : 61 अंक : 12 प्रकाशन तिथि : 25 नवम्बर कुल पृष्ठ : 36 प्रेषण तिथि : 4 दिसम्बर 2024

शुल्क एक प्रति : 15/- वार्षिक : 150/- रुपये पंचवर्षीय 700/- रुपये दस वर्षीय 1300/- रुपये

पूज्य श्री तनसिंह जी की 45वीं पुण्यतिथि पर सादर पुष्पांजलि

पूज्य श्री तनसिंह जी

जीने के बहाने मुझे आये नहीं, रंग बिरंगे रंग मुझे भाये नहीं
तेरे ही रंग में जीने के ढंग हैं, प्राणों में प्राण को जोड़ दे।

श्री क्षत्रिय युवक संघ के संस्थापक

पूज्य श्री तनसिंह जी

की 45वीं पुण्यतिथि पर उनके चरणों में सादर वंदन

पूज्य श्री तनसिंह जी

25 जनवरी, 1924 - 07 दिसम्बर, 1979

हारे अर्जुन को कर्म योग का पाठ पढ़ाने आया हूं।
मेरी कुटिया जाग तेरा इतिहास लिखाने आया हूं।।

IAS / RAS

तैयारी करने का राजस्थान का सर्वश्रेष्ठ संस्थान

स्प्रिंग बोर्ड

Spring Board

Springboard Academy, Main Riddi Siddi Choraha,
Opposite Bank of Baroda, Gopalpura, Bypass Jaipur

Website : www.springboardindia.org

संघशक्ति

4 दिसम्बर, 2024

वर्ष : 61 अंक : 12

-: सम्पादक :-

राजेन्द्र सिंह राठौड़

शुल्क - एक प्रति : 15/- रुपये, वार्षिक : 150/- रुपये, पंचवर्षीय : 700/- रुपये, दस वर्षीय : 1300/- रुपये

विषय - सूची

❍ समाचार संक्षेप	✍	04
❍ चलता रहे मेरा संघ	✍ श्री भगवानसिंह जी रोलसाहबसर	05
❍ पूज्य श्री तनसिंह जी (के सम्बन्ध में)	✍ श्री चैन सिंह बैठवास	08
❍ संघ यात्रा	✍ स्व. श्री गोपालसिंह जालिया	10
❍ राणा पूंजा थे पानरवा के सोलंकी राजपूत	✍ श्री युधिष्ठिर	16
❍ जीवन भगवन्मय कैसे बने?	✍ श्री जयदयाल जी गोयन्दका	22
❍ घावों को आभूषण मानने वाले योद्धा राणा सांगा	✍ डॉ. श्री मातुसिंह मानपुरा	25
❍ श्री तनोट राय माताजी	✍ श्री भंवरसिंह मांडासी	27
❍ बंटोगे तो कटोगे	✍ श्री गुमानसिंह धमोरा	29
❍ महान विजेता महाराव सुरताण देवड़ा	✍ डॉ. श्री उदयसिंह डिंगार	30
❍ अपनी बात	✍	32

समाचार संक्षेप

पू. आयुवानसिंहजी की जयन्ती :

श्री क्षत्रिय युवक संघ के द्वितीय संघ प्रमुख पूज्य आयुवानसिंह जी की 104वीं जयन्ती श्रद्धापूर्वक अनेक स्थानों पर मनाई गई। इस अवसर पर संघ संरक्षक माननीय श्री भगवानसिंह जी जे कहा कि जयन्तियाँ उन्हीं की मनाई जानी सार्थक है जिन्होंने अपना जीवन अन्यों के लिए समर्पित किया हो। ऐसे लोग महापुरुष होते हैं और पूज्य आयुवानसिंह जी ऐसे ही महापुरुष थे। ऐसे व्यक्तियों की जयंतियों से हम प्रेरणा ले सकते हैं और अपना जीवन उनके बताए मार्ग पर ला सकते हैं। संरक्षक श्री ने पू. आयुवानसिंह जी के साथ बिताए समय के अनेक संस्मरण भी सुनाए। संघप्रमुख श्री लक्ष्मणसिंह जी ने कहा कि क्षत्रिय जाति रत्नगर्भा है जिसमें महापुरुष जन्म लेते रहे हैं। त्याग, बलिदान, सत्य और न्याय के द्वारा जनमानस को प्रेरणा देने वाले अनेक महापुरुष क्षत्रिय जाति में आए हैं। स्वयं भगवान भी अवतार लेकर इसी जाति में बार-बार आए हैं। आयुवानसिंह जी ने भी अपना जीवन इसी प्रकार जीया। चौपासनी स्कूल से सम्बन्धित आन्दोलन, भू-स्वामी आन्दोलन, राजाओं के राजनैतिक सलाहकार रूप में भी उनकी भूमिका को विस्तार से बताया।

आयुवानसिंह जी की 104वीं जयन्ती (17 अक्टूबर) के उपलक्ष में अनेक स्थानों पर कार्यक्रम आयोजित हुए। बाड़मेर में मोहन गुरुकुल छात्रावास, श्री कृष्णा छात्रावास, द सक्सेस हॉस्टल में जयन्ती कार्यक्रम सम्पन्न हुए। भूपाल राजपूत छात्रालय चित्तौड़गढ़, ओल्ड बोयेज भवन बी. एन. युनिवर्सिटि उदयपुर, दुकवाड़ा (बांसवाड़ा), विजयनगर (अजमेर), आयुवान निकेतन कुचामन, पीड़वा (डीडवाना), छपारा (लाडनू), डूंगरी (रानीवाड़ा), वाड़ाभवजी (जसवंतपुरा) में कार्यक्रम सम्पन्न हुए। सांचोर, जीवाणा, दुर्गा महिला विकास संस्थान सीकर, खिवांदी (पाली), शिक्षक कॉलोनी जोधपुर, चौपासनी, गंगासरा (बाड़मेर), तरवर डेर (सेड़वा), तनाश्रम जैसलमेर, पोकरण, नूंवा, बंडवा, दसूसर, रतनगढ़, साहवा, खिंदारा (पाली), चौहटन, तनायन जोधपुर, रामगढ, बडोड़ागांव, मूलाना, सिवाणा, बालोतरा, वांकलपुरा, बामणु, जाली (भीलवाड़ा), महेश नगर जयपुर में जयन्ती कार्यक्रम सम्पन्न हुए। टोपी चेरी उद्यान सूरत, गिरगांव चौपाटी, संजीवैया पार्क, सिकन्दराबाद, भिवण्डी, मुंबई में तनेराज शाखा, वीर प्रताप शाखा, वीर दुर्गादास शाखा, बेंगलुरू मण्डल के राणासिंह बेट में, गुड़ामालाणी, उण्डखा में जयन्ती मनाने के भी समाचार हैं।

सभी जगह पूज्य आयुवानसिंह जी का परिचय देते हुए बताया गया कि वे श्रेष्ठ साहित्यकार थे, कुशल राजनीतिज्ञ थे, सच्चे समाज सुधारक और राष्ट्रवादी व्यक्तित्व के धनी थे। सेवा, सहयोग, समर्पण, श्रद्धा उनके जीवन का मूल मंत्र था।

शिविर :

अक्टूबर माह में अनेक शिषेर सम्पन्न हुए। चार तथा सात दिवसीय शिविर सम्पन्न हुए। बालकों के शिविर भी थे तथा मातृशक्ति के शिविर भी सम्पन्न हुए। मातृशक्ति शिविरों में बालिकाओं की संख्या आशा से अधिक रही, यह शुभ संकेत है। संघप्रमुखश्री भी कई सात दिवसीय शिविरों में पहुँचे जो अक्टूबर व नवम्बर में सम्पन्न हुए। पांचोटा, कल्याणपुर, सनावड़ा, दिवराला, जाम कण्डोरणा (गुजरात) में सात दिवसीय शिविर सम्पन्न हुए।

चरेल (गुजरात) में मातृशक्ति का सात दिवसीय शिविर सम्पन्न हुआ। बडोड़ागांव (जैसलमेर) में चार दिवसीय बालिका शिविर में 57 गाँवों की 380 बालिकाएँ पहुँची।

(शेष पृष्ठ 33 पर)

चलता रहे मेरा संघ

(50 वर्ष से ऊपर की आयु वर्ग के दम्पती शिविर ऋषिकेश के विदाई कार्यक्रम, 14.3.2003 को माननीय भगवानसिंहजी के उद्बोधन का संक्षेप)

श्री क्षत्रिय युवक संघ की इस यात्रा का यहाँ का पड़ाव आज पूरा हो रहा है, परन्तु संघ यात्रा समाप्त नहीं हुई है। अब हमको आगे की यात्रा में चलना है। जब हम इस प्रकार के पड़ाव में रुकते हैं, तो सुख-दुख की बातें करते हैं। यात्रा में क्या भूलें हुई, क्या हमारा दुनिया के लोगों के साथ लोक-व्यवहार रहा, क्या दुनिया के लोगों ने हमारे साथ व्यवहार किया, हमारा और उनका व्यवहार अपेक्षित से भिन्न था या अपेक्षा अनुसार ही था, इन पर विचार हम करते हैं। थोड़ा भूतकाल का वर्णन होता है और पड़ाव के दिनों में भविष्य, वर्तमान और वर्तमान भूतकाल बनता जाता है, उन घटनाओं का भी विश्लेषण करते हैं। यात्रा को सुगम बनाने के लिए भावी योजनाएं बनाई जाती हैं। दायित्व सौंपे व लिए जाते हैं। इसी प्रकार का यह एक पड़ाव आगे की यात्रा करने के लिए सहायक बन जाए, ऐसी हर पड़ाव की इच्छाएं होती हैं।

हमने व्यक्तिगत साधनाओं की बजाए सामुहिक साधना को चुना है। सामुहिक संस्कारमयी कर्म प्रणाली को अपनाया है। इसमें अभ्यास समूह में किया जाता है लेकिन साधना व्यक्तिगत होती है। श्री क्षत्रिय युवक संघ का मुख्य कार्य क्षत्रिय जाति में क्षत्रियोचित संस्कारों का निर्माण करके मानव मात्र के कल्याण में सहयोगी बनना है। पूज्य नारायणसिंह जी रेड़ा ने एक बार चर्चा में समझाते हुए कहा था कि सामान्यतया हम इस प्रकार की बात करते हैं कि आओ मिल-बैठकर कोई निर्णय लें और कार्य करें। दिशा निर्देशन लें व दें। किन्तु यदि देखा जाए तो मिल-बैठकर समझौते तो किए जा सकते हैं, निर्णय नहीं लिए जा सकते। संस्कार निर्माण विचार-विमर्श से नहीं निर्णय से हो सकता है और निर्णय व्यक्तिगत ही होते हैं। सामुहिक तो अभ्यास होता है। अभ्यास किसको करवाएं? पूरा समाज न संघ में आता है, न सत्संग में आता, अतः व्यक्ति के ही निर्णय चलते हैं। जो दृढ निश्चयी होता है, उसका ही निर्णय चलता है। समूह निर्णय कभी नहीं लेता। आदर्श पुरुष राम का राज्याभिषेक होने को था। सुमन्त राम को बुलाने आए। राम गये और पिता की स्थिति देखकर किंचित विस्मय हुआ। पिता से पूछते हैं कि अचानक मनःस्थिति के बदलने का क्या कारण है? पर उनके मुँह से आवाज नहीं निकली। केकैयी ने राम के वनवास की बात बताई तो क्या करना है, इसके लिए राम ने किसी से सलाह-मशविरा नहीं किया। राज तिलक के लिए आए थे पर छोड़कर तत्काल वनवास चले गये। उस समय जो उद्गार आए हैं, उनको तो वे ही समझ सकते हैं या उनके जैसे निर्णय लेने वाले ही समझ सकते हैं।

राम ने तो सोचा- मेरा अहोभाग्य है कि वन में संतों का सान्निध्य मिलेगा, वन के रमणीय दृश्य मिलेंगे, प्रकृति के बीच रहने का अवसर मिलेगा। उन्होंने माँ का उपकार माना और निर्णय ले लिया। वे प्रश्न भी कर सकते थे, पर जिस राह पर वे गए उससे संसार का कल्याण हो गया। माँ से व पत्नी से भी सलाह-मशविरा नहीं, इजाजत लेने व सूचना देने गये। दिल के अन्दर इतनी खुशी जैसे खुशियों का भण्डार मिल गया हो। हाड़ी रानी ने पति को मोह ग्रस्त देखा तो क्या तत्काल निर्णय लिया, सभा नहीं की, मिटिंग नहीं की। मस्तक काटने पर कितनी अपार खुशी हुई होगी कि मुझे आज पति के मोह को विध्वंश करने का सौभाग्य मिला है। ऐसे बलिदान को ईश्वर प्राप्ति का मार्ग मानकर संसार के कल्याण के लिए निर्णय लिया।

बर्तमान में भी ऐसा ही हो रहा है। पूज्य तनसिंहजी में समस्त योग्यताएं होते हुए भी उन सबको तिलांजलि देकर

हम सब के कल्याण के लिए जो निर्णय लिया, मार्ग बताया वह निर्णय उन्हीं का था। 1959 में हल्दीघाटी शिविर में आई बरसात में सहगायन डायरी भीग गई। पूज्य नारायणसिंहजी ने कहा– डायरी भीग चुकी है, यह डायरी मुझे दे दें। पूज्य तनसिंहजी में कहा– यह डायरी ही क्या, सब कुछ तुम्हें ही देने वाला हूँ। पूज्य नारायणसिंहजी ने तत्काल निर्णय लिया– मुझे तनसिंहजी का हो जाना है, फिर कभी पीछे मुड़कर नहीं देखा। कपूत और निर्मोही भी कहे गए होंगे पर अपने निर्णय से डिगे नहीं तो वे जीवनमुक्त हो गए और हमें बहुत कुछ दे गए।

समूह के निर्णय प्रभावी नहीं होते, निर्णय व्यक्तिगत ही प्रभावित रहते हैं। परमेश्वर की कृपा से श्री क्षत्रिय युवक संघ ने दम्पतियों को बुलाया है पर निर्णय सामुहिक नहीं करेंगे, पति, पत्नी को अलग-अलग निर्णय करना है। यहाँ जो पति का धर्म, वहीं पत्नी का; जो पति का ईष्ट, वही पत्नी का, गुरु और मार्ग भी वही लेकिन चुनने का अधिकार दोनों को अपना है। पति को बात लादने का अधिकार नहीं है। राम की तरह सूचना देने का अधिकार है। पत्नी छाया की तरह पति के साथ चले, पति सोचे वह केवल मेरे भरोसे है। सब सम्बन्ध तोड़कर आई है, फिर भी निर्णय अपना-अपना।

संघ ने अपनी बात कही और उसकी पुष्टि यहाँ महात्माओं से भी करवा दी। पूज्य तनसिंहजी ने मार्ग खोजा, वे स्वयं महात्मा, युगपुरुष, महापुरुष, युग प्रवर्तक रूप में आए, उनकी बात की पुष्टि अन्यत्र करवाने की आवश्यकता नहीं। 'गुमराह हठीलों के प्रांगण में मैं अलख जगाने आया हूँ।'' समाज में काम करना है और समाज गुमराह तो है ही, हठीला भी है। गुमराहपन छोड़ते नहीं। एक शिविरार्थी ने बताया कि पूज्य तनसिंहजी के सपने को पूरा करने में अन्य महात्माओं का आशीर्वाद प्राप्त हो रहा है। अब तनसिंहजी और उनका संघ समाज में प्रकट होंगे। तीर्थ करने के मन से आप लोग आए होंगे, पर यह तो बहाना खोजा था। मैं आपको तीर्थ करवाने नहीं आया था। परमेश्वर की कृपा से मुझे ऐसा मार्ग सुझाया गया। जो प्रेरणा मिलती है उसमें बह जाता हूँ। बहने के बाद आनन्द आता है। आपके साथ कोई सख्ती, निष्ठुरता अथवा आघात पहुँचा हो, पर मेरी विवशता थी। न ऐसा कोई उद्देश्य था, और न ऐसा करना ही था, केवल बहाव में बहा हूँ। जो भी संघ में हो रहा है या होगा वह भगवानसिंह कर रहा है, ऐसा मत सोच लेना। यह श्री क्षत्रिय युवक संघ की आवश्यकता और ईश्वर की कृपा है। जो संघ की आवश्यकता को समझता है, वह जानता है कि यह समाज की आवश्यकता है, परमेश्वर की आवश्यकता है, अत: वही अपना कार्य कर रहा है। मुझे शाबाशी या दोष दें तो आपकी मर्जी। आपको साथ में आया देखकर उत्साह से भर जाता हूँ। परमेश्वर की लीला जो प्रकट हो रही है, अभिभूत होकर देख रहा हूँ।

आपके परस्पर सम्बन्धों को भी देख रहा हूँ। आपके स्वभाव के अन्दर हो रहे परिवर्तन को भी देख रहा हूँ और लग रहा है कि जो होना चाहिए वही हो रहा है। वही होता है। आप हो सकता है अन्य कुछ सोचें पर दूसरा कुछ होने की सम्भावना भी नहीं है। बहुत खुशी हुई आप लोगों से मिलकर और विदा करते हुए भी खुशी है कि आपका पड़ाव आज यात्रा में बदल रहा है। गति आएगी आप में। आप में आने वाली गति को नमस्कार करता हूँ। अपेक्षाएँ तो बहुत करता हूँ, वे ही अशान्ति का कारण बन जाती हैं।

परमेश्वर की चाह सबका कल्याण करने की ही रहती है, ऐसा हमने सुना है। हमारा समाज, हमारी जाति अपने स्वप्न हो समझे। तनसिंहजी ने कहा था कि समाज अपने स्वप्न को समझे, उसके लिए कर्मरत रहे और उसका कल्याण हो। तनसिंहजी के इस भाव को हमने आँखों से देखा है। अर्जुन को जो युद्ध के समय भगवान कृष्ण ने ज्ञान दिया, किस प्रकार का वातावरण रहा होगा और वैसे वातावरण के बीच स्थितप्रज्ञ की चर्चा। आज के वातावरण

में संसार में जो स्वार्थपूर्ति की लहर झोंके मार रही है, समाज की ऐसी स्थिति में संघ का ज्ञान भी उस स्थिति जैसा ही है। लेकिन स्वधर्म के स्वप्न को आकार देने को कर्मवीर जुट रहे हैं। पूज्य नारायणसिंहजी के जीवन में देखा उनके निर्णय का परिणाम। हमने जो देखा है, जाना है, पाया है, वह पूरा का पूरा बांट दें। यह करने को विवश करना ही समाज सेवा है। स्वधर्म पालन है। ईश्वर प्राप्ति, मुक्ति संघ मार्ग में है। जो कुछ संघ से पाया है वह पूरे समाज को देना है क्योंकि यह सबका है, जो पाया वह भी सबका बन जाता है।

आपको बुलाकर सहभागी बनाया है, आप भी कृपणता न रखें बांटने में। पर बांट वही सकता है, जिसने प्राप्त किया है। हम सभी तो ऐसे हैं जिनके पास कुछ है नहीं। हमारे पास कुछ है नहीं बांटने को। संघ आह्वान करता है कि हमारे पास बहुत कुछ है, तुम भी अपनी निर्धनता को छोड़कर सम्पन्न बन जाओ। यह संघ की बात है और यही हमने यहाँ महात्माओं से सुना। पिछले 16 दिनों में अलग-अलग वर्ग में आते रहे, यहाँ का आनन्द यहाँ का ज्ञान लूटते रहे, जाते रहे। जिसने जितना लूटा, वह उतना ही सम्पन्न हुआ और उतना ही आगे दे पाएगा। यह चलता रहे यही पूज्य तनसिंहजी की, संघ की, परमेश्वर की चाह है। पहले ले लो, लूट लो। आप सभी प्रसन्न रहें, यह संघ की चाह है। आपका प्रेम और दृढ हो, कर्तव्यबोध आप में और अधिक आ गया है।

निषेधात्मक बात कहनी है कि समूह रूप में या व्यक्तिगत रूप में कोई ऐसा काम न करें जिससे हमारे पर, संघ पर, संघ की गतिविधि पर, सत्संग पर, परमेश्वर पर, गंगा पर अंगुली उठती हो। अब हमारा व्यवहार प्रकट होगा। अब ध्यान रहना चाहिए कि मैं केवल पति ही नहीं, संघ का स्वयंसेवक भी हूँ। हर किसी के साथ अपने व्यवहार में यह बात ध्यान रहे-पुत्र, पुत्री, बहू, परिवार में या कार्यालय आदि में सावधानी बनाए रखना ही साधना है। गफलत हो तो पतन है। ऋषि-मुनियों का ज्ञान, पूज्य तनसिंहजी की पहल, पूज्य नारायणसिंहजी का अनुकरण हमें कुछ दे जाए, यह उन सभी की चाह है। हम प्रसन्न रहें, पर तभी रह सकेंगे जब यहाँ ग्रहण किया हुआ व्यवहार में लाएंगे। यह स्मरण रखना है, व्यवहार में लाना है।

●

आयु की प्रगल्भता और बुद्धि की प्रौढ़ता में गहरा सम्बन्ध है। दूसरे अर्थों में यह भी कह सकते हैं कि बुद्धि की प्रगल्भता से आयु की प्रौढ़ता भी आती है। जीवायु चाहे पन्द्रह वर्ष की ही हो पर बौद्धिक प्रौढ़ता और प्रगल्भता उस समय भी आ सकती है। हमारी साधना वह अभिनव प्रयोग है जिसमें अल्पायु में ही प्रौढ़ता को लाने का यत्न करते हैं, छिछलेपन में प्रगल्भता का बीजारोपण करते हैं। प्राकृतिक कठिनाइयाँ इसीलिए स्वाभाविक है और यही कारण है कि हमारी सफलता कष्ट साध्य और मन्द गामिनी है। प्रौढ़ता और प्रगल्भता के सूत्र को पकड़ने पर ही साधना सुसाध्य और क्षिप्रगामिनी बन जाती है।

– पूज्य तनसिंह जी

पूज्य श्री तनसिंह जी (के सम्बन्ध में)

''जो कुछ देखा, समझा व अनुभव किया''

– चैनसिंह बैठवास

क्या समाज, क्या राष्ट्र सबके चहुंमुखी विकास का आधार सहयोगी भाव ही है। सहयोगी भाव ही सामाजिकता का आधार है। सामाजिक व्यवस्थाएँ जैसे वर्ण व्यवस्था आदि सहयोगी भाव पर ही टिकी हुई है। यह कर्तव्यों पर आधारित व्यवस्था है। जब तक लोग अपने-अपने उत्तरदायित्व के प्रति जागरूक रहे, अपने कर्तव्य पर आरूढ़ रहे, तब तक यह भारत वर्ष फलता-फूलता रहा और यहाँ बनी व्यवस्थाएँ चाहे वे वर्णव्यवस्था हो या कोई और सुव्यवस्थित ढंग से चलती रही, पर जब लोगों में सामाजिक भाव की जगह स्वार्थ का भाव जगने लगा तो जीवन में नियत कर्तव्य कर्म की उपेक्षा कर अनावश्यक तर्कहीन मनोभावों से ग्रस्त होकर अधिकारों की मांग करने लगे तब से सबकी शांति अशांति में, सुव्यवस्था अव्यवस्था में तब्दील हो गई और सभी अब अपनी उपादेयता खो निरर्थकताओं और व्यर्थताओं के बोझ से बोझिल हैं।

नियत कर्तव्य कर्म की उपेक्षा के कारण समाज व राष्ट्र में पनपी जड़ता-जन्य विकृतियाँ से सामाजिक ढाँचा अस्त-व्यस्त हो गया, सारी व्यवस्थाएँ छिन्न-भिन्न हो गयी। इस तरह हमारी इस साँस्कृतिक धरोहर को नष्ट होते देख पूज्य श्री तनसिंह जी उद्वेलित हो गये। उन्होंने सोचा कि भविष्य में होने वाले इसके दुष्परिणामों को रोकना क्षात्र शक्ति के सक्रिय हुए बिना संभव नहीं है। इसलिए पूज्य श्री तनसिंह जी ने क्षत्रियों में सुप्त पड़ी क्षात्र शक्ति को जागृत कर उन्हें क्षेत्रियत्व का बोध कराने और उन्हें नियत कर्तव्य कर्म का पाठ पढ़ाकर उन्हें अपने उत्तरदायित्वों का बोध कराने व कर्तव्य के सात्विक मार्ग पर प्रतिष्ठित करने के लिए श्री क्षत्रिय युवक -संघ की स्थापना कर दिन-रात अथक परिश्रम के साथ वे समाज जागरण की यात्रा पर अपने सहयोगियों के साथ गाँव-गाँव, नगर-नगर जागृति का संदेश देने निकल पड़े।

सोये हुए समाज का पतन यानी उनका विनाश संभव है इसलिए पूज्य श्री तनसिंह जी ने समाज को जागृत करने के लिए बिछुड़े हुओं के मेले लगाने शुरू किये ताकि उन्हें अपने नियत कर्तव्य कर्म, स्वधर्म व अपने उत्तरदायित्वों का भान हो। यह भाव जगने पर उनमें समाज के प्रति सात्विक त्याग की भावना जगेगी। उनमें निस्तेज पड़ी क्षात्र वृति जगने पर लोगों को अहसास होगा कि समाज उनके लिए नहीं है, अपितु वे समाज के लिए हैं।

सुप्त झात्र शक्ति को जागृत कर क्षात्र शक्ति का अभ्युदय केवल क्षत्रिय वर्ग के लिए ही नहीं, अपितु मानव जीवन व प्राणी मात्र की आवश्यकता थी। इसलिए पथ विचलित लोगों को कर्तव्य के सात्विक मार्ग पर प्रतिष्ठित करने के लिए समय की मांग और जगत की आवश्यकता बनकर समयानुकूल दिशा-दर्शन और उपयुक्त मार्गदर्शन के लिए इस कौम की कोख से एक कर्मवीर महापुरुष के रूप में पूज्य श्री तनसिंह जी का इस धरा पर अवतरण हुआ।

रसातल में धंसते क्षत्रिय वर्ग के साथ अन्य वर्गों को भी बचाने के लिए पूज्य श्री तनसिंह जी कृत संकल्प थे। समाज व राष्ट्र की दशा और दिशा दोनों को बदल कर, उनकी वर्तमान स्थिति में परिवर्तन करके ही उन्हें इस दयनीय स्थिति से उबारा जा सकता था, इसलिए इस रुग्ण समाज व राष्ट्र को एक व्यवहारिक शिक्षण और मार्गदर्शन देने के लिए पूज्य श्री ने श्री क्षत्रिय युवक संघ की स्थापना की।

श्री क्षत्रिय युवक संघ साधना केन्द्र है। पूज्य श्री तनसिंहजी ने श्री क्षत्रिय युवक संघ के मार्फत एक साधना पद्धति दी है। क्षत्रिय वर्ग का आचरण हमेशा ईश्वरीय चाह के अनुरूप रहा है। पर जब वह अपने नियत कर्तव्य कर्म

से विमुख हुआ तब से उनका आचरण यानी उनकी वृतियाँ और प्रवृतियाँ ईश्वरीय चाह के अनुकूल नहीं रही। इसलिए श्री क्षत्रिय युवक संघ के शिविरों में आत्म मंथन द्वारा स्वयं सेवकों को अपनी वृतियों और प्रवृतियों का अवलोकन करने का अभ्यास कराया जाता है। इस निरंतर व नियमित अभ्यास से जड़ता-जन्य विकृतियों का धीरे-धीरे लोप होने लगता है। यह एक शुद्धिकरण का अभ्यास है। इसके निरंतर चलते रहने से भीतर जो जड़ताजन्य विकृतियाँ पनपी थी उनका पूर्णतया लोप हो जायेगा और एक दिन फिर अभ्यासी पुनः क्षत्रियत्व से विभूषित हो जायेंगे, क्षात्र शक्ति पुनः सभी की रगों में दौड़ने लगेगी।

श्री कृष्ण ने धर्म विस्मृत, मोह ग्रसित व कर्तव्य पथ से विचलित अर्जुन को गीता के माध्यम से स्वधर्म की शिक्षा दी। पूज्य श्री तनसिंह जी ने अपने नियत कर्तव्य कर्म से विचलित धर्म विस्मृत क्षत्रियों को श्री क्षत्रिय युवक संघ के माध्यम से स्वधर्म की शिक्षा दी।

पूज्य श्री तनसिंहजी ने बताया-

''स्वधर्म का पालन हमें केवल इसलिए नहीं करना चाहिए कि वह हमारा प्राकृतिक कर्म है, हमारी उपयोगिता का साधन है, बल्कि इसलिए भी करना चाहिए कि वह हमारी सत्ता के स्वामी की मांग है, जिसे पूरा करना स्वामी भक्ति ही नहीं, कर्तव्य पालन भी है।

चारों वर्णों के कर्तव्य कर्म ईश्वर ने निर्धारित किये हैं। अपने-अपने कर्तव्य कर्म पथ पर चल कर अपने जीवन को सार्थक बनाया जा सकता है। हर वर्ण अपने कर्तव्य कर्म का पालन करते हुए स्वधर्म पथ पर चले यही ईश्वर की इच्छा है, इसे समझें।''

कर्तव्य यानी दायित्व बोध परमेश्वर की राह है और अधिकार की मांग पतन की राह है। अधिकारों की मांग, सम्मान की मांग करके हमने पतन की राह चुनी है, इसलिए पूज्य श्री तनसिंह जी ने कहा -

''धर्म, कर्म, कर्तव्य भुलाकर अपने कुल के नाश बने''

पूज्य श्री तनसिंह जी समाज का भविष्य बदलने के लिए समाज के लोगों के बीच आये। वे समाज में नव निर्माण करना चाहते थे इसलिए श्री क्षत्रिय युवक संघ की स्थापना कर समाज का कायाकल्प करने के लिए कर्मरत हुए, पर हम अपनी इच्छाएँ लाद कर नव निर्माण में बाधक बन रहे हैं, इसलिए पूज्य श्री तनसिंह जी ने कहा -

''धर्म भ्रष्ट कर्तव्यहीन बन जग में भी जीवोगे क्या? अपने हाथों से घर जलवा कर रस्ते पर लेटोगे क्या?''

संघ के सोच के विपरीत चिन्तन समाज के नव निर्माण में बाधा पैदा करता है। जहाँ अधिकार की भावना है, मांग है, वहाँ नव निर्माण नहीं हो सकता। अधिकार के त्याग में ही नव निर्माण है, समाज का उज्ज्वल भविष्य है।

अधिक की मांग ही अधिकार है जो पतन की राह है। श्री क्षत्रिय युवक संघ अपने कर्तव्य को ही अधिकार मानने की बात कहता है। श्री क्षत्रिय युवक संघ अधिकार का नहीं, अपने दायित्व का बोध कराता है। पूज्य श्री अपने संघ के स्वयंसेवकों को कर्तव्य की याद दिलाते हुए कहते हैं -

''हम अपनेपन को भूल गये, कुछ सम्भव हो तो याद करें।''

जिन्हें अपने कर्तव्य का, दायित्व का बोध हो गया, सही मायने में वे ही श्री क्षत्रिय युवक संघ के सच्चे सहयोगी हैं। कर्तव्य यानी दायित्व बोध ही हमें परमेश्वर की राह पर ले जाता है। कर्तव्य यानी दायित्व बोध परमेश्वर की राह है। इसी पथ पर, इसी राह पर हमारे पूर्वज चलते आये हैं, इसलिए पूज्य श्री तनसिंह जी ने कहा-

''अपने पुरखों के पथ से बिछुड़े, पथ पर फिर से आना ही होगा।''

पूज्य श्री तनसिंहजी ने कर्तव्य और अधिकार सम्बन्धी मार्मिक बात बताते हुए कहा-

''हम विषयों और विकारों के शिकार होकर जीवन को कर्तव्य भूमि न मानकर उसे अधिकार भोग का क्षेत्र मान लेते हैं। वैसी अवस्था में जीवन एक उत्तरदायित्व का रूप न रहकर मात्र अधिकारों की छीना-झपटी का संघर्ष बन जाता है।''

(शेष पृष्ठ 15 पर)

गतांक से आगे

संघ यात्रा

– स्व. गोपाल सिंह जालिया

किन्तु गुणस्वभाव से विपरीत कर्म विष कन्या के समान त्याज्य है। भिन्न प्रकृति में न तो मनुष्य का जीवन सुरक्षित है और न किसी कीट पंतगे का ही। यदि क्षत्रिय समाज वैश्य की तराजू तोलने लगेगा, तो या तो वह क्षत्रिय ही नहीं रहेगा, या फिर वह तलवार की अपेक्षा तुला को ही ठीक मानकर क्षात्रधर्म को भी लाभ हानि के पलड़ों में तोलने लग जायेगा। परिणाम यह होगा कि समाज की उत्सर्ग मूलक समाज व्यवस्था मृत प्रायः होने लगेगी।

गुण स्वभावानुसार नियत किया हुआ कर्म करने में कीर्ति लाभ है तथा कोई पाप भी नहीं लगता । स्वधर्म पालन करने से केवल पापों का अवरोध ही नहीं होता, अपितु इहलौकिक और पारलौकिक दोनों प्रकार के कल्याण प्राप्त होते हैं। हतो वा प्राप्स्यसि स्वर्गं जित्वा वा भोक्ष्यसे सहीम गी. 2/37 मरने पर स्वर्ग मिलेगा और विजयी होने पर पृथ्वी का भोग प्राप्त होगा। स्वधर्म पालन के कर्तव्य में दो ही मार्ग हैं, या तो संघर्ष के क्षेत्र में कर्मयोग करते हुए मर जाओ और या फिर विजयी बनो। स्वधर्म रहित जीवन के कर्म के फलों को भोगने वाला पाप आयु पुरुष व्यर्थ ही जीता है। इसलिए शास्त्र विधि से नियत किए हुए स्वधर्म रूप कर्म को करे, क्योंकि कर्म न करने की अपेक्षा कर्म करना श्रेष्ठ है तथा कर्म न करने से शरीर निर्वाह भी नहीं होगा। अतः समाज जागरण के निमित्त हमें समाज को कर्तव्य पालन करने की सच्ची शिक्षा देनी है।

इस बात की हमें कभी चिन्ता नहीं करनी चाहिए कि हमारा कार्यक्रम देश, काल और परिस्थिति के अनुकूल है या नहीं। हमें तो कवेल यही देखना है, कि हमारा कार्य समाज के गुण, कर्म व स्वभाव से मेल खाता है या नहीं। यदि हमारा कार्य समाज की प्रकृति के अनुकूल है, तो विपरीत परिस्थितियां अपने आप अनुकूल हो जायेगी। यदि देश काल की मांग कर्तव्य पालन, स्वधर्म पालन में रुकावट डालती है, तो हमें स्वधर्म ही पालन करना चाहिए। थोड़े दिनों में विरोधी शक्तियाँ या तो समाप्त हो जायेगी या रूपान्तरित। गीता ने स्वधर्म पालन पर अधिक बल इसलिए दिया है कि यह मोक्ष का भी सरलतम मार्ग है। यदि व्यक्ति स्वधर्म पालन करता है तो उसी से उसे मोक्ष मिल जाता है। मोक्ष के लिए सन्यासी बनकर जंगल जंगल भटकना उसके लिए आवश्यक नहीं। गीता स्वधर्म पालन से धर्म, अर्थ, काम और मोक्ष चारों पुरुषार्थ की सिद्धियों का विश्वास दिलाती है। यह हमारे जीवन का हेतु है, इसलिए यह हमारे जीवन का एक मात्र ध्येय है। यह हमारा साध्य भी है और साधन भी।

कई लोग इसे साधन ही मानते हैं, जिससे इसका महत्त्व कम हो जाता है। अतः कर्तव्य समझकर ही इसका पालन करना चाहिए।

क्षत्रिय परम्परा में यानी क्षत्रिय कुल में जन्म लेने वाले सभी उसके साधक हैं। पर केवल जन्म लेने मात्र से क्षत्रिय जीवन सार्थक नहीं हो जाता। गुण कर्म स्वभावानुसार जीवन जीने पर ही क्षत्रिय शब्द सार्थक होता है। जीवन सार्थक करना सभी चाहते हैं। इसके लिए समझना आवश्यक है कि हमारे गुण स्वभाव यानी हमारी प्रकृति क्या है जिसके अनुसार हम जीवन जीना आरम्भ करें? पूर्वजों का चरित्र हमारे लिए प्रेरणा का स्रोत है। हमारा सौभाग्य है कि हमारे पास महान संस्कृति रूपी थाली है।

हमारे पास इतना सब होते हुए भी हम पतन के मुख में चले ही क्यों जा जा रहे हैं? इसका उत्तर भी पूज्य श्री तनसिंहजी ने गीता में खोज निकाला है। यह उनकी महत्त्वपूर्ण उपलब्धि है। क्षात्रधर्म का पालन तो हमारी

संस्कृति व गीता के आधार पर जीवन भर के लिए पहले से ही निश्चित है। पर हम इसको भूल गये। इसी के कारण आज हम अनुपयोगी हो गये जो समाजरूपी बाग पल्लवित, पुष्पित व सुगन्धित था जिसकी बहार से संसार आनन्दमय था। सब उजड़ गया है। क्या ध्येय के समझ जाने से,उसकी व्याख्या करने से वह सब कुछ मिल जायेगा जो हमने खोया है? लक्ष्य निर्धारण के बाद उसके – अनुरूप सरल व व्यवहारिक मार्ग के लिए गीता की ओर देखना पड़ेगा। साध्य के साथ ऐसी साधना चाहिए जो विचारों को आचरण में ढाल सकें।

साधना, चेतना की ओर सतोगुणीय चेष्टा ही साधना है। साधना में दिव्य शक्ति है। साधना की गति उर्ध्वमुखी ही हुआ करती है। अधोमुखी गति को साधना नहीं कहते। अनुशासन साधना का एक स्वरूप है। व्यक्तिगत साधना संयम है। किन्तु समाजिक साधना को हम अनुशासन कह सकते हैं। अनुशासन का शाब्दिक अर्थ है, शासन के पीछे चलना। व्यक्तिगत अनुशासन का अर्थ है स्वयं अपने द्वारा शासित होना। व्यक्ति में जो शासक सत्ता है, वह उसका ज्ञान है। मन तो वृतियों का दास है। ज्ञान वह शासक अंग है। इसलिए ज्ञान द्वारा व्यक्ति अपने कर्मों को नियमित करे तो वह व्यक्तिगत साधना का अनुशासन है, गीता में भी ज्ञान के द्वारा कर्मों को शुद्ध करने का उल्लेख है। यदि हमें सामाजिक अनुशासन लाना है तो हमें सभी उद्योग सफलता की इच्छा से रहित होकर करने चाहिए और ज्ञान से समाज जागरण के कर्मों के दोष को जलाकर शुद्ध करना चाहिए। मनुष्य की पराजय उसके अन्तः स्थल की पराजय है। कोई ऐसी कठिनाई नहीं है, जिसे पार नहीं किया जा सकता ।

इन्द्रियाँ और उसके विषय में रागद्वेष है जिनके वश में नहीं होना चाहिए। क्योंकि यह दोनों कल्याण मार्ग में विघ्न उपस्थित करने वाले शत्रु हैं। मन की दुर्बलताओं और इन्द्रियों के रागद्वेष पर विजय पाने का अनूठा आन्दोलन गीता के ज्ञान से ही हो सकता है। इस आन्दोलन का साधना मार्ग भी बड़ा सरल है। कछुए की भाँति इन्द्रिय विषय को भीतर समेट लेना । बहिर्मुखी आचरण को अंतर्मुखी बनाना ही गीता की साधना है। हम समाज जागरण के कार्य में अपने चित्त की वृत्तियों को एकाग्र कर, रागद्वेष से परे होकर, एकनिष्ट होकर करेंगे, तभी हमारे आचरण का प्रभाव समाज पर पड़ेगा। सामाजिक कार्य करने वाले व्यक्ति की स्थिति भी इसी प्रकार एकाग्र होनी चाहिए। तभी वह सदियों से सोये समाज को जागृत कर सकेगा।

लोगों का हृदय जीतने के लिए तो आत्मबल की दिव्य शक्ति चाहिए। जो गीता की साधना से ही प्राप्त हो सकती है। इस ज्ञान की गरिमा के कारण गीता पाँच हजार वर्ष बीतने के बाद भी नवीन लगती है। कृष्ण और पाँडव स्वर्गवासी हो गये पर गीता आज भी जीवित है, क्योंकि उसकी साधना में सनातन सत्य की झाँकी है जो अनादि और अनन्त है। प्रारम्भकाल में इसकी साधना कितनी ही कठिन हो, किन्तु परिणाम तो अमृत के समान ही होंगे। फिर भी इसे छोड़ दूसरी कोई साधना हो ही नहीं सकती ।

आज समाज के कई व्यक्ति समाज को उनके पीछे न चलने का दोष देते हैं। किन्तु क्या उन्होंने कभी इसके कारण पर भी विचार किया है, कि पीछे चलने के भी कोई कारण हैं। यह समाज मनुष्यों का समाज है, भेड़ों का समुदाय नहीं, कि बिना सोचे समझे योंही दौड़ने लग जाय। समाज हर कार्यकर्ता को देखता है। उससे कोई छिपा नहीं। हमारे अन्तर की आग को देखकर, आत्मा की ज्योति को देखकर किसने कदम आगे नहीं बढ़ाए ? यदि वह चिनगारी ही निःशेष हो जाय तो शब्द भेदी पथ प्रदर्शन का खतरा कौन मोल ले ? आवश्यकता है भीतर की ज्योति जगाने की। हृदय की पीड़ा एकाग्र करने की। जो समाज को ज्योति और हृदय की पीड़ा देता है, उसे समाज नेतृत्व देगा। आत्मशक्ति की प्रबलता के समक्ष तो कट्टर विरोधी भी नत मस्तक हो जाते हैं। साधारण लोगों का तो कहना ही क्या ?

हमारी साधना, हमारा चरित्र और आचरण अभेद्यगढ़ है। यह आध्यात्मिक शक्ति केवल गीता जन्य ज्ञान साधना प्रणाली से ही प्राप्त हो सकती है। अन्य मार्ग तो केवल धोखा है। इस साधना को आचरण में डालकर साधक क्षत्रियोचित संस्कारों का निर्माण संस्कारमय कार्य प्रणाली से अपने जीवन में लाकर ध्येय से साक्षात्कार कर सकेगा।

श्री क्षत्रिय युवक संघ का वर्तमान :- 'भिखारी की आत्मकथा' में पूज्य श्री तनसिंह जी के श्री क्षत्रिय युवक संघ के वर्तमान के विषय में अनुभव इस प्रकार हैं- ''तुम जानते ही हो मेरे पास अब कुछ भी नहीं है। अपने आस पास के वातावरण को प्रभावित करने के लिए जो प्रचलित साधन हुआ करते हैं, उनमें एक भी मेरे पास नहीं है। न धन का सहयोग, न आकर्षक विचारधारा और न महत्त्वाकांक्षी सहयोगी फिर भी मैंने अतीत से लेकर आज तक कुछ भी खोया नहीं है, पाया ही है। मेरे वर्तमान! तुम्हारे निर्णय के पीछे मेरा श्रम और श्रद्धा दो महत्त्वपूर्ण तथ्य रहे हैं। मैं सोचता हूँ श्रम और श्रद्धा के सहारे ही कोई भविष्य बना सकता है। अपना परिश्रम और अपने प्रति अटूट विश्वास ही मेरे भिखारी जीवन की अमूल्य निधियाँ हैं। अपने प्रति अटूट विश्वास ही मुझे दूसरों के प्रति अटूट विश्वास पैदा करता है। मुझे श्रद्धा की उपयोगी शिक्षा देता है। श्रद्धा जो आज के युग में बड़ा ही विवादास्पद गुण है, किन्तु विषम परिस्थितियों में ऐसा सम्बल और कोई नहीं हो सकता। जब अपने पराये हो जाते हैं, अपने सारे प्रयत्न विफल या अपर्याप्त हो जाते हैं और जब जीवन में असहायावस्था का भान होता है, तब केवल श्रद्धा ही सहायता जुटा सकती है। और जुटाती आई है। विचारों की दृष्टि से अतीत से वर्तमान तक के मार्ग में मुझे कुछ परिवर्तन करने पड़े हैं। वे परिवर्तन कुछ ठोकरें खाने के बाद अनुभवों के आधार पर किये गये हैं, जो मुझे उत्तरोतर सत्य की ओर प्रेरित होने का मार्ग प्रशस्त करते हैं।

''सबसे पहला अनुभव मुझे हुआ कि समष्टिगत समस्त कर्तव्य व्यक्ति के निजी कर्तव्य हैं। उसमें किसी के सहयोग पर अपने उत्तरदयित्व को भूलना नहीं चाहिए। हमारा प्रिय से प्रिय व्यक्ति हमसे तटस्थ, यहाँ तक कि विरोधी हो सकता है। इसलिए मार्ग की साधना में किसी पर आश्रित न रहकर हठपूर्वक अपने आपका निर्माण करना चाहिए। अत्यन्त छोटी से लेकर अत्यन्त महत्त्वपूर्ण बात पर भी मतभेद हो सकता है। वह मतभेद विरोधी ही नहीं किसी को भी निष्क्रिय बना सकता है। पर मेरे वर्तमान ! तुमने मेरी आँखें खोल दी कि अपना कर्तव्य मुझे किसी के भरोसे नहीं छोड़ना चाहिए। बल्कि अपने आपको इस योग्य बना लेना चाहिए, कि हर जाने वाले की योग्यता की पूर्ति स्वयं द्वारा यथा समय कर ली जाय। श्रम से कोई भी सत्य असाध्य नहीं है। इसलिए तुमने मुझे पहला पाठ पढाया है कि दुनियां में कर्मवीरों के लिए कोई भी वस्तु असम्भव नहीं है। श्रम ही वह कुंजी है, जिससे श्रेय साधन के द्वार खुला करते हैं। इसी से दूर जाने वाला प्रायश्चित के आँसू भरकर वापिस लौट आता है। दूसरा अनुभव मुझे हुआ कि किसी प्रकार की भी क्रान्ति के लिए सभी प्रकार की भ्रान्ति का निवारण होना अत्यन्त अनिवार्य है। भिखारी समाज का कोई एक लक्ष्य नहीं रहा। सभी प्रयत्न भिन्न-भिन्न दिशाओं में होते रहे, परिणाम शून्य। सोचा यह जाता था कि येनकेन प्रकारेण हमें तुमसे समझौता कर लेना चाहिए और अपना मन्तव्य सिद्ध होने पर फिर जैसा होगा कर लिया जायेगा। पर यह एक बहुत बड़ी भ्रान्ति सिद्ध हुई। हम समझोते से जीवन को दाव पर लगाना पसन्द नहीं करते, हम चाहते हैं भ्रान्ति से कोई समझोता नहीं किया जाय, अस्पष्टता को सर्वथा निर्वासित किया जायेगा तभी हमे सही रूप में मालूम होगा कि हम कहाँ जाना चाहते हैं और कहाँ जा रहे हैं? दूसरी भ्रान्ति थी प्रणाली की। मेरे वर्तमान! तुम्हारा लुभावना और मोहित करने वाला यह स्वरूप ही ऐसा है कि व्यक्ति चाहता है यदि मेरा इरादा नेक है तो मैं कुछ भी करूं, बुरा नहीं है। परन्तु यह भी एक बड़ी भ्रान्ति है।

प्रकाश का उपार्जन प्रकाश सृजन करने वाले तत्त्वों से ही हो सकता है। अन्धकार की साधना से प्रकाश होने की कल्पना ही मिथ्या हठधर्मी है। उसमें बाहर भीतर की शुद्धि आवश्यक है। इसलिए लक्ष्य और मार्ग की अनुरूपता आवश्यक है। उपरोक्त दोनों ही प्रकार की भ्रान्तियों की मुझे बहुत भारी कीमत चुकानी पड़ी परन्तु इसके अतिरिक्त भी कई भ्रान्तियाँ थी। साधक के सम्बन्ध में हमारा यह ख्याल था, कि भिखारियों का पेट भरने के लिए राजा लोग राजमहल छोड़कर भीख मांगते हुए जंगल-जंगल भटकेंगे। इस भ्रान्ति ने भी हमें अर्से तक भटकाये रखा। हर नये जादूगर को अवतार मानकर जय जयकार किया पर आज वह भ्रान्ति भी मिट गई है। हमें अपनी तकदीर को अपने ही हाथों बनानी पड़ेगी। आज जो आकर्षण के स्थल दिखाई देते हैं पर शनैः शनैः वे स्थल भी सभी को भ्रान्ति ही लगेंगे। जो अभी तक उपरोक्त भ्रान्तियों के चक्कर में है, आज भी राजमहल के चक्कर लगाने में अपने आपको राजनितिज्ञ जोड़ तोड़ करने में कुशल नीतिज्ञ मानता है, परन्तु समय ही बतायेगा, जैसा समय ने सदा ही बताया है। छत के सहारे कोई टिका रहने की आजीवन कल्पना नहीं कर सकता। यह भी एक भ्रान्ति थी, कि भिखारी कुछ नहीं कर सकते। कर तो केवल वही सकते हैं जो राजा हैं या सेठ हैं। पर हकीकत यह है कि श्रम का कोई भी कण व्यर्थ नहीं जाता और जिसके कलेजे में चोट नहीं लगती, वह चिल्लाने का चाहे जितना प्रयास करे, पर उसकी क्रियायें रहेंगी अभिनय मात्र ही और कुछ नहीं। असहयोग होते हुए भी हे वर्तमान! तुम मेरे साथ हो, यह सिद्ध करने के लिए कि किसी भी प्रकार की राजनैतिक, सामाजिक, आर्थिक, आध्यात्मिक क्रान्ति भ्रम को दूर भगाने से ही हो सकती है। सत्य से साक्षात्कार की वही एक मात्र और आवश्यक शर्त है।

''तीसरा अनुभव मुझे हुआ कि मनुष्य की प्रतिष्ठा किसी पद से बनाना बौद्धिक दासता का सृजन करना है। पश्चिम के अधिनायकवाद का पतन इसलिए हुआ कि पद पर किसी को प्रतिष्ठित कर उसे सिद्ध करने के पीछे बौद्धिक निर्बलता है। उस निर्बलता के दूर हो जाने पर लोगों ने व्यक्ति और पद दोनों को उखाड़ फेंका। यद्यपि इस उखाड़ फेंकने में ऐतिहासिक दृष्टिकोण से परीस्थितियाँ कारण रही हैं, फिर भी सूक्ष्म कारणों- में यही कारण हो सकता है कि प्रतिष्ठा उसके गुणों से ही होनी चाहिए। उस प्रतिष्ठा के सामने पद का स्थान अत्यन्त गौण है। एक अर्द्ध सत्य को हम पूर्ण मान लेते हैं कि व्यक्ति सिद्धान्त के सामने कुछ भी नहीं है। सत्य यह है कि व्यक्ति और सिद्धान्त की तुलना नहीं हो सकती, क्योंकि वे एक दूसरे के पूरक है। सिद्धान्तों और गुणों की कोई कमी नहीं है, किन्तु व्यक्ति उनके अवतार की भूमि है। वे उसी में परिस्कृत और समुन्नत होकर निखरा करते हैं। बिना व्यक्ति के गुण अव्यवहारिक और आश्रयहीन होता है। इसलिए सिद्धान्त और गुण के नाम पर व्यक्ति की अवहेलना नहीं की जा सकती। क्योंकि गुण और सिद्धानत उसी की देन है। सिद्धान्तहीन व्यक्ति किसी भी हालत में खड़ा नहीं हो सकता, चाहे उसने किसी भी परिवार, जाति अथवा देश में ही क्यों न जन्म लिया हो। इसलिए सिद्धान्त और व्यक्ति एक दूसरे के पूरक हैं। दोनों का अपने अपने स्थान पर अपना निजी महत्त्व है।

''शक्ति के किसी एक स्वरूप से सर्वांगीण लक्ष्यवेध की कल्पना दुसाध्य है। इसलिए आध्यात्मिक शक्ति को गौण नहीं माना जा सकता, उसके उपार्जन के लिए नवीन योग का सृजन जो करना पड़ेगा। न तो शारीरिक व मानसिक शक्ति की कीमत पर, एक को अत्यधिक महत्त्व और दूसरे की उपेक्षा कर एक पक्षीय साधना करना चाहता, न इस प्रकार असन्तुलन ही लाना चाहता। इससे न केवल मैं अपने कुटुम्ब में आत्मज्ञान ही लाना चाहता, बल्कि भक्ति, ज्ञान और कर्म की त्रिवेणी से अपने संबंधों को पवित्रतम बनाना चाहता हूँ। जब तक इस प्रकार का

शिक्षण नहीं होता चारित्रिक पवित्रता और नैतिक महानता का पाठ किसी भी जाति को नहीं पढाया जा सकता। केवल बौद्धिक संस्कार ही पर्याप्त नहीं हैं और न केवल भौतिक संस्कार ही पर्याप्त हैं, बल्कि ज्ञान प्रदीप्त हृदय की भावना के बिना इन सबका पवित्र होना और सार्थक रूप से सक्रिय होना आकाश कुसुम के सिवाय कुछ भी नहीं है।

''मेरे साधक ही मेरे साधन हैं। मेरे सहयोगी वर्ग का आज जो वर्तमान स्वरूप है वह मेरे सन्तोष के लिए काफी है। हम परस्पर एक दूसरे से सन्तुष्ट हैं। वर्षों की उथल पुथल के बाद हमने जिस स्वास्थ्य का लाभ अब लिया है, वह हमें इस जीवन को जीने की प्रेरणा देता है। इसलिए मैं कह सकता हूँ कि सब अवगुणों के होते हुए भी मैं अपने सहयोगियों का अत्यन्त आभारी, कृतज्ञ और भक्त हूँ। हम एक दूसरे को धोखा देने की कल्पना ही नहीं कर सकते। जो अपने साथी को धोखा देता है वह अपने आपको धोखा देता है। और जो अपने आपको धोखा देता है वह विभीषण की निकृष्टतम संतान है। इसके सिवाय जितनी भिन्नताएँ हैं, उन्हें मैं पाखण्ड और दगेबाजी के आधुनिक तरीकों के सिवाय कुछ नहीं मानता। जिन्होंने अपनी बुद्धि को अव्यभिचारिणी बनाया है, उन्हें अपनी भक्ति, श्रद्धा को भी अव्यभिचारिणी बनाना ही होगा। पवित्रता का मतलब भी एक और केवल एक तत्त्व की अखिलता है। मेरे अद्वितीय साधकों ने भी इस मार्ग पर अपने चरण बढ़ाने आरम्भ कर दिये हैं। ज्यों-ज्यों यह चरण बढ़ रहे हैं, त्यों त्यों यह भिखारी जीवन निखार ला रहा है। जीवन में पहली ही बार अनुभव करता हूँ कि हम भिखारी नहीं, संसार सारा भीख माँगता दिखाई देता है। भिखारी मैं तब ही हूँ जब मेरे पास कुछ भी जमा बन्दी नहीं है। जब मेरे पास भिखारियों का सर्वस्व है तो उनका सर्वस्व ही मेरा धन है। फिर न तो मैं भिखारी हूँ और न मेरे सहयोगी। यह भिखारी की आत्मकथा नहीं। कुबेर की आत्मकथा है। किन्तु मैं अच्छी तरह जानता हूँ कि एक कुबेर भी किसी दिन भिखारी बन सकता है। इस भावना के किसी भी आवेग में बहकर मेरे वर्तमान मैं तुमसे तब तक सन्तोष नहीं कर सकता, जब तक तुम्हारे माध्यम से एक उज्ज्वल भविष्य की नींव नहीं डाल देता। इसलिए मेरे वर्तमान! मैं तुम्हारे प्रत्येक क्षण को व्यर्थ नहीं जाने देता। उससे एक महान भविष्य का सृजन करने के लिए दिन रात परिश्रम कर रहा हूँ। जिस दिन मेरा भविष्य मूर्तिमान होगा उस दिन ही मैं कहूँगा- अब मैं भिखारी नहीं हूँ।''

श्री क्षत्रिय युवक संघ का भविष्य- भविष्य को सम्बोधन करते हुए पूज्य श्री तनसिंहजी ने लिखा है- ''कुछ लोग तुम्हें प्राप्त करने के लिए शब्दकोष में तुम्हारी परिभाषाएँ ढूंढ़ते हैं, दूसरे लोग अपने सामान्य कर्म के फल में तुम्हारा आह्वान करते हैं। कुछ ऐसे भी लोग होते हैं, जो तुम्हारे लिए दिनरात पागल हो कभी इधर और कभी उधर निरर्थक रूप से भटकते रहते हैं। यह मेरा अनुमान है, कि न तुम शब्दकोष में हो, न कर्मफल में और न उत्कृष्ट कर्मचेष्टा में ही हो। यदि तुम कहीं हो, तो मनुष्य के भीतर हो। उसके हृदय की जलती हुई ज्वाला में हो। यदि वह आग सुलगी ही नहीं है तो जितने प्रयत्न और पुरुषार्थ दिखाई देते हैं, वे मात्र ढ़ोंग ही हैं। फिर चाहे, उनके लिए कितना ही श्रम और साधन क्यों न खर्च किया हो। पर यदि आग जल रही है, तो वह सबसे पहले जलाने वाले को ही जलाती है। उसी की राख से तुम्हारे महल बनते हैं। उसके दिल के घाव झरोखे हैं। जिनमें बैठकर तुम उसका प्रणाम स्वीकार किया करते हो। उसकी बुद्धि तुम्हारा प्राण है। और उसकी चेष्टा तुम्हारा जीवन। इस आग को जलाने का मैं वर्षों से प्रायत्न कर रहा हूँ। इसी ने मुझे भिखारी बना दिया है। इसी से मैं अपने सहयोगियों को भी जलाता जाता हूँ। जो थोड़ी बहुत राख बनी है, उसी में तुम्हारा कुछ स्वरूप मैंने देखा है। मुझे विश्वास हो गया, तुम वही हो, जिसे मैं अब तक चाहता आ रहा हूँ। तुम्हारा क्या व्यक्त स्वरूप होगा इसे इस समय व्यक्त भी नहीं किया जा सकता,

क्योंकि संसार आश्चर्यजनक रूप से इतना बदल रहा है, कि कोई कह नहीं सकता तुम किस रूप में और कब आ धमकोगे। आज यदि तुम्हारे रूप का वर्णन भी करूँगा तो सामान्य जन उसे कभी नहीं मानेगा। इसलिए तुम्हारे शाब्दिक चित्रण और तार्किक विश्लेषण की अपेक्षा यह कहीं अच्छा है कि तुम्हारे लिए जीवन का समस्त परिश्रम, पसीना और आँसू भेंट कर दूँ। मेरे उज्जवल भविष्य तुम्हारे लिए मैंने अपनी प्रिय से प्रिय वस्तुओं का दान कभी का कर दिया। अब तुम्हारे लिए मैं नया परिश्रम, पसीना और आँसू बटोरता जाता हूँ। केवल तेरे लिए।''

पूज्य श्री तनसिंह जी के स्वप्नों के आधार पर श्री क्षत्रिय युवक संघ का जीवन निखर कर आया है। पूज्य श्री तनसिंहजी और श्री क्षत्रिय युवक संघ दो नाम रूप से भिन्न प्रतीत होते हैं। पर एक ही सिक्के के दो पहलू हैं। श्री क्षत्रिय युवक संघ का सही स्वरूप हमारे समझ में आ सके, इसी प्रयोजन से यह संकलन तैयार किया गया है। पूज्य श्री तनसिंह जी ने अपने साहित्य में उस विचारधारा को स्पष्ट किया जिसके आधार पर समाज भवन का नवीन रूप से निर्माण करना है। उस भवन की नींव (आधार) स्वधर्म है। श्री क्षत्रिय युवक संघ की साधना गीता की दिव्य साधना शक्ति है, जिसके अनुसार इस भवन की रचना होनी है। यह सारा ज्ञान तो उनके साहित्य के स्वाध्याय से मिल सकता है। उनके साहित्य को अलमारियों की शोभा मात्र ही न बनाकर नियमित स्वाध्याय करें। उनकी पुस्तकें सीमित क्षेत्र में ही पहुँच रही हैं। विस्तार से उनके विचारों की जानकारी हो यही इस संकलन का हेतु है। संघ शक्ति का क्षेत्र समाज में विस्तृत हुआ है। अधिक से अधिक पाठकों तक यह विचारधारा पहुँचे। पाठक इन विचारों को अपने जीवन में उतारें। श्री क्षत्रिय युवक संध के सहयोगी बनकर सक्रिय सहयोग की कामना से बढते रहें। ●

पृष्ठ 8 का शेष

''जो कुछ देखा, समझा व अनुभव किया''

पूज्य श्री तनसिंह जी ने जीवन में कर्तव्य का क्या महत्त्व है, इसको स्पष्ट करते हुए कहा–

''जीवन है कर्तव्य कहानी''

''कर्तव्य में त्याग की भावना है। त्याग का भाव अधिकार से श्रेष्ठ है। अधिकार में भोग लिप्सा की बू आती है। अपने कर्तव्य का पालन करने में जो सुख है, वह सुख सांसारिक भोगों को भोगने में नहीं है।''

गीता के तीसरे अध्याय के दसवाँ श्लोक में सृष्टि के आदि में ब्रह्मा जी ने मनुष्य को नि:स्वार्थभाव से अपने-अपने कर्तव्य के द्वारा एक दूसरे को सुख पहुँचाने की आज्ञा देते हैं –

सहयज्ञाः प्रजाः सृष्ट्वा पुरोवाच प्रजापतिः।
अनेन प्रविष्यध्वमेष वोऽस्त्विष्ट कामधुक् ।। 10।।

गीता के अनुसार– जो दूसरे का अधिकार है, वही हमारा कर्तव्य है। अतः प्रत्येक मनुष्य को अपने कर्तव्य पालन के द्वारा दूसरे के अधिकार की रक्षा करनी है। दूसरों के हित के लिए कर्तव्य कर्म करने से ही लौकिक और पारलौकिक उन्नति हो सकती है।

''मुझे सुख कैसे मिले?''– केवल इसी चाहना के कारण मनुष्य कर्तव्यच्युत और पतित हो जाता है। अत: ''दूसरों को सुख कैसे मिले?''– ऐसा भावकर्म-योगी को सदा ही रखना चाहिये। तात्पर्य यह है कि खुद सुख न ले, प्रत्युत दूसरे को सुख दे। सृष्टि की रचना भोग के लिए नहीं है, प्रत्युत उद्धार के लिये है।

होनहार को रोकना मनुष्य के हाथ की बात नहीं है, परन्तु अपने कर्तव्य का पालन करके मनुष्य अपना उद्धार कर सकता है और कर्तव्यच्युत होकर अपना पतन कर सकता है। **(क्रमश:)**

राणा पूंजा थे पानरवा के सोलंकी राजपूत

– युधिष्ठिर

इस भ्रष्टतंत्र ने जिसकी रगों में काला खून दौड़ रहा है। गन्दगी और बेशर्मी जिनका व्यवहार है, जो प्रजा का रक्त चूसकर भी चैन से सो जाते हैं। जिनका मकसद मात्र और मात्र है कुर्सी लम्बे समय तक मेरी कैसे बनी रहे। शासक रक्षक होता है, प्रजा का हितकर होता है, देश में शान्ति चाहता है। लेकिन ये ऐसे निरंकुश भ्रष्ट नेता हैं जिन्हें अगर कुर्सी मिलती हो तो ये देश के टुकड़े-टुकडे करने को भी तैयार हैं। जिन राजपूतों ने ढाल बनकर हिंदू धर्म की रक्षा की उनके इतिहास को जैसे बाहरी लुटेरे मंदिर तोड़ते थे वैसे तोड़ा जा रहा है। सिर्फ इसलिए कि अगर राजपूत महापुरुष को गुर्जर या भील बता दें तो गुर्जर और भीलों के वोट हमें मिल सके। जो छवि महाराणा प्रताप, दुर्गादास राठौड़ व अन्य राजपूत नायकों की आज भी लोगों के हृदय में है वैसी ये लोग 78 सालों के लोकतंत्र में भी नहीं बना सके इसलिए ये राजपूतों के पूर्वजों से जातिगत ईर्ष्या करते हैं। इसी संदर्भ में पृथ्वीराज और पन्नाधाय को गुर्जर और राणा पूंजा को भील बताया जा रहा है।

पानरवा के राणा पूंजा के संदर्भ में अब तक जो प्राचीन हस्तलिखित पोथियां व प्रकाशित साहित्य उपलब्ध है वह सभी राणा पूंजा को सोलंकी राजपूत ही सिद्ध करते हैं। पूंजा को भील बताने वाला एक भी हस्तलिखित दस्तावेज या प्रकाशित प्रमाण उपलब्ध नहीं है।

पानरवा ठिकाने का 'नसलनामा' (वंशावली) बड़वा ऊंकारजी की पोथी से उपलब्ध होता है। इस पोथी के प्रारंभ में आबू के परमार, अग्निकुण्ड से राजपूतों की उत्पत्ति के सन्दर्भ में पडिहार, परमार, चौहान ओर सोलंकी नामक राजपूतों की उत्पत्ति का विवरण दिया गया है। सोलंकी राजपूतों की उत्पत्ति के क्रम में चौलुक्य सोलंकी राजपूतों की प्रारंभ से पीढ़ी-दर-पीढ़ी वंशावली उनकी उपशाखाओं तथा उनके अधीन स्थानों के अनुसार दी गई है। इसमें राणा पूंजा को राणा दीदा का पुत्र व पानरवा का स्वामी बताया गया है तथा महाराणा उदयसिंह द्वारा पूंजा के पड़दादा हरपाल को 'राणा' उपाधि प्रदान करना उल्लेखित किया गया है।

बड़वा रामसिंग वल्द इसकदास की पोथी में भोमट (झाड़ोल-फलासिया) क्षेत्र के सोलंकी राजपूत ठिकानों के सामंतों के गद्दी पर बैठने का विवरण, उनके पुत्रों तथा शादी-विवाह का विवरण दिया गया है। इस क्रम में राणा पूंजा का विवाह वि.सं. 1609 (सन् 1552) में चौहान दूदाजी की पुत्री गयण कंवर से होना तथा उससे कुंवर रामाजी (रणजी) का होना बताया गया है।

भोमट का इतिहास नामक ग्रंथ की हस्तलिखित पोथी राजस्थान प्राच्य विधा प्रतिष्ठान सिटी पैलेस, उद्यपुर के संग्रह में है जिसका ग्रंथांक 2680 है। इसमें पानरवा ठिकाने पर भोजराज सोलंकी के पौत्र अक्षयराज द्वारा सन् 1478 (मेवाड़ के महाराणा रायमल 1473-1509 ई.) के समय में राजपूत यादव जीवराज को मारकर कब्जा करना बताया है। इसमें हरपाल को महाराणा उदयसिंह द्वारा 'राणा' उपाधि देना तथा हल्दीघाटी के युद्ध में राणा पूंजा द्वारा महाराणा प्रताप की सेना के साथ भाग लेना भी बताया है।

श्यामदास कृत 'वीर विनोद' के प्रथम भाग के पृष्ठ 196 पर पानरवा के जागीरदार को अन्हलवाड़ा पट्टन के राजा सिद्धराज सोलंकी से सम्बन्धित अक्षयराज का वंशज बताया है व पानरवा की जागीर में 48 गाँवों का होना बताया है।

पानरवा खानदान के भाई-बन्धुओं के ठिकाने ओगणा, उमरया, आदीवास और ओड़ा में है। 'वीर विनोद' के पृष्ठ 151 तथा 153 पर प्रताप की सेना के साथ व हल्दीघाटी युद्ध में पूंजा का संदर्भ दिया है।

महाराणा भूपालसिंह के राज्यकाल में सर सुखदेव प्रसाद मेवाड़ के प्रधान नियुक्त हुए। इन्होंने महाराणा के निदेश पर 'मेवाड़ अण्डर महाराणा भूपालसिंह' शीर्षक से पुस्तक तैयार कर सन् 1935 में प्रकाशित कराई। इसके पृष्ठ 22 पर पानरवा के तत्कालीन राणा मोहब्बत सिंह को सोलंकी राजपूत बताया है तथा मेवाड़ सरकार को रु. 500 की राशि देना व द्वितीय श्रेणी के मजिस्ट्रेट के अधिकार से युक्त बताया है।

सी. एस. बेले कृत 'लिस्ट ऑफ रूलिंग प्रिन्सेज, चीफस एण्ड लीडिंग परसोनेज इन राजपूताना एण्ड अजमेर-मेरवाडा' नामक पुस्तक व्यापक सर्वेक्षण व गहन अध्ययन के बाद तैयार की गई, इस पुस्तक के पृष्ठ 181 से 183 के अनुसार पानरवा ठिकाने पर भोजराज सोलंकी के पौत्र अक्षयराज द्वारा सन् 1478 में कब्जा करना बताया है तथा अक्षयराज के वंशजों के नाम इस प्रकार दिए हैं- 1. अक्षयराज (भोजराज सोलंकी का पड़पोता), 2. राजसिंह, 3. महिपाल, 4. हरपाल (जिसे महाराणा उदयसिंह ने राणा की उपाधि दी), 5. राणा दीदा, 6. राणा पूंजा, 7. राणा रणजी, 8. राणा चंद्रभाण, 9. राणा सूरजमल, 10. राणा भगवानजी, 11. राणा जोधाजी, 12. राणा रघुनाथ सिंह, 13. राणा नाथूसिंह, 14. राणा गुमानसिंह, 15. राणा कीर्ति सिंह, 16. राणा केसरीसिंह, 17. राणा उदयसिंह, 18. राणा प्रतापसिंह, 19. राणा भवानीसिंह, 20. राणा अर्जुन सिंह, 21. राणा मोहब्बत सिंह व 22. राणा मनोहर सिंह (वर्तमान)। इस तरह चौथी पीढ़ी में हरपाल को महाराणा उदयसिंह द्वारा 'राणा' उपाधि देना तथा छठी पीढ़ी में राणा पूंजा द्वारा भील सैनिकों के साथ हल्दीघाटी के युद्ध (सन् 1576) में भाग लेना बेले ने उद्धृत किया है।

जगदीश सिंह गहलोत लिखित राजपूतों का इतिहास (प्रथम भाग) के पृष्ठ 352-353 पर भी सी. एस. वेले के विवरण के अनुसार ही पानरवा ठिकाने का संस्थापक अक्षयराज सोलंकी को बताकर अक्षयराज से आगे की 21 पीढ़ियों की वंशावली दी है।

उपरोक्त समस्त हस्तलिखित व प्रकाशित विवरण तथा संदर्भ के आधार पर स्पष्ट होता है कि इस ठिकाने का संस्थापक गुजरात के अन्हिलवाड़ा पाट्टन के शासक सिद्धराज सोलंकी की वंश परम्परा में भोजराज सोलंकी का पौत्र अक्षयराज सोलंकी है जिसने मेवाड़ के महाराणा रायमल के शासनकाल में सन् 1478 में यादव राजपूत जीवराज को मार कर हस्तगत किया।

पानरवा पर सोलंकी राजपूतों के कब्जा होने के पूर्व भी यह ठिकाना यादव राजपूतों के ही अधीन था। भीलों के अधीन नहीं। ये सोलंकी आबू के अग्निकुण्ड से उत्पन्न वाली मान्यता से सम्बन्ध रखने वाले राजपूत हैं।

इस पानरवा ठिकाने पर सोलंकी राजपूतों का सन् 1478 से कब्जा है तथा मूल संस्थापक अक्षयराज सोलंकी से लेकर अब तक कुल 22 पीढ़ियाँ हो चुकी हैं। वर्तमान में अक्षयराज सोलंकी के वंशज राणा मोहब्बत सिंह के पुत्र राणा मनोहर सिंह सोलंकी है।

हल्दीघाटी के प्रसिद्ध युद्ध सन् 1576 में महाराणा प्रताप की सेना के चंदावल में यही राणा पूंजा अपने भील सैनिकों के साथ मौजूद था जो वंश परम्परा के अनुसार सोलंकी राजपूत था।

सन 1478 से सन् 1887 (वर्तमान) तक के 519 वर्षों से पानरवा पर सोलंकी राजपूतों का ही अधिकार रहा है, इससे पूर्व भी यादव राजपूतों का अधिकार था। इस प्रकार राणा पूंजा को भील बताना इतिहास विरुद्ध तथा सत्य को नकारना है। पानरवा पर भील जाति के अधिपत्य का अथवा राणा पूंजा का भील वंश से सम्बन्धित होने का एक भी प्रमाण उपलब्ध नहीं होता।

कुछ लोगों का मानना है कि राणा पूंजा को भीलू राणा कहा जाता है क्योंकि वह भील जाति से है। यह परम्परा व तथ्यों के विपरीत है। पानरवा के पास ही कोल्यारी गाँव के रहने वाले मोतीलाल तेजावत जन्म व जाति से ओसवाल जैन थे, लेकिन उन्होंने आजीवन भीलों के हितों के लिए संघर्ष किया, इस कारण उन्हें भीली नेता कहा जाने लगा,

लेकिन वे जाति से भील नहीं थे। यही बात राणा पूंजा के लिए भी लागू होती है। पानरवा ठिकाना भील जाति बहुल ठिकाना है। इस ठिकाने की अधिकांश प्रजा भील है। भील बाहुल्य निश्चित रूप से ज्यादा था। हल्दीघाटी युद्ध में राणा पूंजा के नेतृत्व में ये ही भील सैनिक थे। इस तरह भील बाहुल्य प्रदेश का नेतृत्व करने के कारण वहाँ के राणा को भीलू राणा कहना स्वाभाविक है।

यह भी कहा जा रहा है कि पानरवा ठिकाने के कुछ जागीरदारों ने भील कन्याओं से शादी कर ली इस कारण राजपूतों ने उनसे सम्बन्ध विच्छेद कर लिए और कालान्तर में वे भीलों में परिगणित हो गए। यह भी तथ्यों से विपरीत है। सामन्तकाल में एक से ज्यादा शादियाँ करने व पासवानेड़ रखने की एक सामान्य परम्परा थी। इनमें गैर राजपूत भी होती थी। लेकिन इस तरह की शादी से पुरुष की जाति नहीं बदलती थी, आज भी यही परम्परा है। पानरवा ठिकाने के वर्तमान जागीरदार राजपूत हैं, शादियाँ भी राजपूतों में ही होती रही है तथा राजपूतों ने इनसे सम्बन्ध विच्छेद भी नहीं किए हैं। पानरवा के अन्य राणाओं की शादियों का विवरण इसी क्रम में बड़वा रामसिंह की पोथी से देखा जा सकता है।

उदयपुर स्थित मोती मगरी पर राणा पूंजा की जो मूर्ति स्थापित है, उसकी वेशभूषा भील जाति के सदृश उत्कीर्ण है। यह वेशभूषा भी राणा पूंजा की नहीं है। एक भील सैनिक की यह वेशभूषा हो सकती है, लेकिन पूंजा की नहीं। महाराणा फतहसिंह जी के समय का पानरवा के राणा अर्जुन सिंह का अश्वारूढ़ एक फोटो चित्र आज भी पानरवा ठिकाने में उपलब्ध है। वह सम्पूर्ण रूप से राजपूती वेशभूषा में है। महाराणा भूपालसिंह ने सन् 1946 में पानरवा के तत्कालीन राणा मोहब्बत सिंह जी को ताजीमी बख्सी, दरबार में बैठक व मुजरा करने सम्बन्धी अधिकार आदि दिए, उस समय का फोटो चित्र भी उपलब्ध है, वह भी सम्पूर्ण राजपूती वेशभूषा का ही है। पानरवा ठिकाने से सम्बन्धित जो रीति-रिवाज, परम्पराएँ, मान्यताएँ आदि परम्पराओं से प्रचलित रही हैं वे सब भी राजपूती ही हैं। पानरवा ठिकाने की ईष्ट देवी खीमज माता है, जिसका मंदिर पानरवा के रावले में आज भी विद्यमान है।

मेवाड राज्य के राज्यचिह्न को लेकर भी नई भ्राँति खड़ी की जा रही है ओर कहा जा रहा है कि यह राज्यचिह्न महाराणा प्रताप ने बनवाया तथा एक तरफ स्वयं को और दूसरी और राणा पूंजा को दर्शाया है। यह तथ्यों के विपरीत है। प्रताप के समय राज्यचिह्न जैसी कोई परम्परा नहीं थी। राज्यचिह्न की परम्परा अंग्रेजों की देन है। मेवाड़ का राज्यचिह्न मेवाड़ के महाराणा शंभूसिंह (1861-1874 ई.) को उनके द्वारा मेवाड़ में किए गए सुधारों के पारितोषिक स्वरूप ब्रिटिश सरकार की ओर से महाराणा को 'जी.सी.एस.आई.' उपाधि प्रदान की गई और इस अवसर पर 6 दिसम्बर, 1871 को उदयपुर के राजमहलों के बड़े चौक में आम दरबार किया गया। इस दरबार में तत्कालीन एजेन्ट गवर्नर जनरल ब्रुक द्वारा इस राज्यचिह्न को कपड़े पर अंकित कर महाराणा को प्रदान किया। इसमें मेवाड़ राज्य की रक्षा में राजपूत योद्धा व दूसरी ओर भील योद्धा अंकित किया गया है, तब से ही यह राज्यचिह्न मेवाड़ का राज्यचिह्न बना व प्रचलन में आया। महाराणा फतहसिंह ने इसे आंशिक परिवर्तन चित्तौड़ जिले के संदर्भ में किया है। इस प्रकार इस राज्यचिह्न में महाराणा प्रताप व राणा पूंजा का अंकन बताना भ्रामक व तथ्यों से एकदम विपरीत है।

डॉ. देवीलाल पालीवाल लिखित पुस्तक 'पानरवा का सोलंकी राजवंश' अनुसार-

''अक्षयराज सोलंकी रावत की उपाधि के साथ पानरवा के शासक बने। अक्षयराज के बाद राजसिंह रावत बने। उनके तीन विवाह क्रमशः भावनगर के चावड़ों, सूत के पंवारों व बेगुं के चुंडावतों के पूर्वज हमीरसिंह के यहाँ हुए। इनके बाद रावत महिपाल हुए और इनके विवाह भी चतरकंवर जी पंवार, राजकंवर जी देवड़ी व मोती कंवरजी सिसोदिणी से हुए। रावत महिपाल के बाद उनके पुत्र रावत हरपाल शासक

बने। राणा हरपाल के विवाह भी सलुंबर, बड़ी सादड़ी, बेदला आदि नामचीन ठिकानों में हुए। राणा हरपाल के बाद उत्तराधिकारी दूदा राणा बने। उनके बाद राणा पूंजा पानरवा के राणा बने। राणा पूंजा 20 फरवरी, 1572 में महाराणा प्रताप के राज्याभिषेक समारोह में भी शामिल हुए थे। पानरवा के शासक सोलंकी राजपूत रहे हैं। इनके विवाह संबंध आदि सभी व्यवहार राजपूतों में रहे हैं।''

संविधान निर्माता के सदस्य रहे बलवंत सिंह मेहता ने राणा पूंजा पर लेख लिखा जिसमें बताया कि-'' 1567 ई. से लगाकर 1680 . तक एक सदी से भी अधिक काल के दौरान महाराणा उदयिंह, महाराणा प्रतापसिंह, महाराणा अमरसिंह और बाद में महाराणा राजसिंह ने मेवाड़ की स्वतंत्रता की रक्षा के लिए मुगल शासक अकबर, जहाँगीर और औरंगजेब से लोहा लिया। उनके इस स्वतंत्रता संघर्ष में पानरवा के सोलंकी शासकों राणा हरपाल, राणा पूंजा, राणा राम और रराणा चन्द्रभाण ने अपने भील सैनिकों को साथ लेकर अपना अपूर्व एवं अवर्णनीय योगदान प्रदान किया।''

इतिहासकार राघवाचार्य व सर सुखदेव ने भी इतिहास में पूंजा को सोलंकी राजपूत तथा पानरवा का राजा होना बताया है। पूंजा के वंशजों की बहिन-बेटियों की शादियाँ राजपूत घरानों में हुई थी। पूंजा के वंशजों के अपने पुरखों के पास वर्षो पुराने चित्र भी मौजूद हैं जिनमें उन्हें राजपूती पोशाक में दिखाया गया है।

राणा पूंजा की वंशावली मौजूद है और उनके वंशज मौजूद हैं। महाराणा उदयसिंह का विवाह सम्बंध पानरवा के राणा हरपाल की बहन रतनबाई सोलंकिणी से रहा।

इतिहासकार डॉ. गोविंद सिंह भीलवाडा के अनुसार-

''इतिहासकारों ने दंत कथाओं के आधार पर भील बनाकर इतिहास बिगाड़ दिया। राणा पूंजा (1572-1610 ई.), महाराणा प्रताप द्वारा मुगल अकबर के विरुद्ध लड़े गए दीर्घकालीन स्वतंत्रता संग्राम का अदम्य सेनानी, पानरवा का सोलंकी शासक एवं भोमट का गौरव वीर योद्धा राणा पूंजा जिसने 1576 ई. के इतिहास प्रसिद्ध हल्दीघाटी युद्ध में महाराणा प्रताप का साथ दिया। 1576 ई. से 1586 ई. तक महाराणा प्रताप द्वारा मेवाड़ के विकट पहाड़ों एवं वनों में मुगल शासक अकबर के विरुद्ध लड़ी गई दस वर्षीय लड़ाई में राणा पूंजा के नेतृत्व में सोलंकी व आदिवासी भील सैनिकों ने जो अवर्णनीय एवं अविस्मरणीय सहयोग प्रदान किया।''

राणा पूंजा मेवाड़ के पानरवा वंश के सोलंकी राजपूत हैं जिसका साक्षी आज पानरवा के सोलंकी उनका वंश खुद मौजूद है। 1997 में राजस्थान सरकार ने भारत के राष्ट्रपति को राणा पूंजा भील की प्रतिमा का अनावरण करने के लिए पानरवा आमंत्रित किया था। इस घटना का न केवल राणा पूंजा के वंशजों ने विरोध किया, बल्कि मेवाड़ के महाराणा महेंद्र सिंह और कई अन्य महत्त्वपूर्ण व्यक्तियों ने भी इसका विरोध किया। अंततः यह कार्यक्रम रद्द कर दिया गया। राणा पूंजा के वंशज जो अभी भी पानरवा में रह रहे हैं ने 23 मार्च, 2022 को प्रधानमंत्री नरेन्द्र मोदी को एक पत्र लिखा था जिसमें अनुरोध किया कि उनके पूर्वजों के गलत चित्रण को रोका जाना चाहिए।

अमित शाह ने राजस्थान के उदयपुर दौरे पर राणा पूंजा को भील बताया था जिसके जवाब में राणा पूंजा के वंशजों ने शाह को पत्र लिखा। पत्र में कृष्णा कंवर ने लिखा कि-

''मैंने इससे पहले प्रधानमंत्री नरेद्र मोदी को भी पत्र लिखकर प्रमारे हिस्ट्री को डिस्ट्रॉय करने से रोकने के लिए उनके हस्तक्षेप की मांग की थी। हम राणा पूंजा जी के वंशज हैं और हम भील नहीं, सोलंकी राजपूत हैं।

इतिहासकार डॉ. एस.बी. सिंह के अनुसार राणा पूंजा राजपूत थे। स्थानीय राजपूतों और भीलों की एक सेना इकट्ठा करने के बाद उन्होंने मुगलों के खिलाफ लड़ाई में महाराणा प्रताप के साथ हाथ मिलाया।

भारत की जनगणना 1961 के दौरान गाँव की सर्वेक्षण रिपोर्ट में दर्ज किया गया कि पानरवा के ठिकानेदार

सोलंकी राजपूत थे। पानरवा परिवार के वर्तमान मुखिया राणा मनोहर सिंह सोलंकी हैं।

ऐतिहासिक प्रमाणों, मेवाड़ राज्य के अभिलेखों, पूंजा के जीवित वंशजों, जो अभी भी पानरवा में रह रहे हैं से यही साबित होता है कि राणा पूंजा सोलंकी राजपूत थे।

इतिहासकार स्वरूपसिंह चूंडावत, ओंकारसिंह राठौड़ और प्रो. प्रधुम्न सिंह चुंडावत ने भी ऐतिहासिक तथ्यों के आधार पर बताया कि राणा पूंजा सोलंकी थे और महाराणा प्रताप के समकालीन थे। प्रसिद्ध इतिहासकार कर्नल जेम्स टॉड ने भी अपने इतिहास ग्रंथ 'एनल्स एंटीक्विटिज ऑफ राजस्थान' में मेवाड़ भू-भाग के भोमिया जागीरदारों का सोलंकी राजपूत होना बताया है। जे.सी. बुक्स ने भी अपनी पुस्तक 'हिस्ट्री ऑफ मेवाड़' में पानरवा और ओगना के ठिकानेदारों का सोलंकी राजपूत होना बयान किया है। भील समुदाय में पूंजा नामक किसी भील नायक का होना इतिहास में नहीं पाया जाता है जिसको कभी किसी महाराणा ने 'राणा' की उपाधि दी हो। उस कालखंड की पोथियों एवं वंशावलियों में केवल पानरवा के सोलंकी अधिपति को ही 'राणा' की उपाधि दिए जाने का उल्लेख है। किसी 'भीलू राजा' के होने का उल्लेख भी कहीं नहीं मिलता। मेवाड़ के महाराणाओं द्वारा दिये गये सम्मान व अन्य सभी ऐतिहासिक प्रमाण उपलब्ध हैं। वह सभी राणा पूंजा को सोलंकी राजपूत होना ही सिद्ध करते हैं। पानरवा पर भील जाति के आधिपत्य का अथवा राणा पूंजा का भील वंश से सम्बन्धित होने का एक भी ऐतिहासिक प्रमाण उपलब्ध नहीं है।

'भीलू राजा' नाम का उपयोग भी पिछले कुछ वर्षों से किया जाने लगा है जिसका व्यवहारिक दृष्टि से कोई अर्थ नहीं है। केवल राणा पूंजा को भील सिद्ध करने की दृष्टि से 'भीलू राजा' नाम को गढ़ा गया है। पुरानी पोथियों, शिलालेखों, पत्रावलियों, वंशावलियों तथा इतिहास ग्रंथों में राणा पूंजा सोलंकी को कहीं भी 'भीलू राजा' संबोधित नहीं किया गया है।

महाराणा प्रताप के सहयोगी राणा पूंजा का पानरवा गाँव का 1576 ईस्वी का शिलालेख प्राप्त हुआ है। इसमें संस्कृत भाषा का प्रयोग हुआ है लेकिन मानक नहीं, कुल 23 पंक्तियाँ हैं और यह 16वीं सदी की देवनागरी लिपि में काले पत्थर पर उत्कीर्ण है। ऐ की मात्रा अक्षर से पूर्व में पड़ी हुई है। मध्य से पूर्व में कतिपय पंक्तियाँ घिस गई हैं लेकिन मध्य से परवर्ती पंक्तियाँ अच्छी तरह सुरक्षित हैं। महाराणा प्रताप के काल का यह सुन्दर लेख अनेक दृष्टियों से महत्त्वपूर्ण है। यह मूलतः सोलंकी राजवंश की प्रशस्ति है जिसके पास उस क्षेत्र का शासनाधिकार था। इसको राणा पूंजा द्वारा तब लिखवाया गया जब प्राचीन शिलावी माता के मन्दिर का जीर्णोद्वार हुआ। यह विक्रम संवत् 1632 और शक संवत् 1498 के फाल्गुन शुक्ला सप्तमी, तद्नुसार 7 फरवरी, 1576 ई. का है। इसमें सोलंकी राजवंश को भारद्वाज ऋषिगोत्र से सम्बद्ध किया गया है। इस नवीकृत मन्दिर के प्रतिष्ठा समारोह में गुरुदेव गोईआ, जीव तथा श्रीकहात अग्रणी थे। इस प्रशस्ति को जेता ने लिखा और सूत्रधार देवधर पुत्र लडखान था। इस अभिलेख के पठन के दौरान पुरातत्वविद् श्रीमुबारक हुसैन, डॉ. चन्द्रशेखर शर्मा एवं पत्रकार गौरव द्विवेदी भी उपस्थित थे।

स्वतंत्रता सेनानी व संविधान निर्माता के सदस्य रहे बलवंत सिंह जी मेहता ने राजस्थान के मुख्य मंत्री भैरू सिंह शेखावत को 1997 में पत्र लिखा। पत्र में उन्होंने याद दिलाया कि 1989 में उन्होंने प्रधानमंत्री राजीव गाँधी का भी विरोध जताया था जब वे राणा पूंजा की एक भील वेशभूषा में प्रतिमा लगाना चाहते थे। राजीव गांधी ने मणिशंकर अय्यर की अध्यक्षता में, जाँच दल भेजा। यह जाँच दल मेहता की बात से सहमत हुआ और सभी विद्वानों के तथ्य के आधार पर कुछ समय बाद प्रताप स्मारक पर स्थापित मूर्ति से आपत्तिजनक शब्दों को हटा दिया गया था। 1997 में जब राणा पूंजा की मूर्ती भील वेशभूषा में, राणा पूंजा के वंशजों की नीजी जमीन पर बिना अनुमति के लगाने का प्रयास किया गया तब

महेन्द्रसिंह जी मेवाड़ (लोक सभा सदस्य और महाराणा प्रताप के वंशज) ने भी राष्ट्रपति के. आर. नारायण को पत्र लिखा जिसके बाद यह कार्यक्रम भी स्थगित हो गया।

इतिहास्कार डॉ. देवीलाल पालिवाल, डॉ. देव कोठारी, राज शेखर व्यास भी इस बात की पुष्टि करते हैं कि राणा पूंजा सोलंकी राजपूत है। इसके अलावा 1931 में प्रकाशित "Rajputana and Ajmer LFST of Ruling Pffences, Chiefs and Leading Person-ages" (Six Edition) का पृष्ठ 191; टि.के. माथुर द्वारा 1987 में प्रकाशित "Feudal Polity of Mewar", -देवीलाल पालीवाल द्वारा 2001 में प्रकाशित ''पानरवा का सोलंकी राजवंश'', 1954 में प्रकाशित "Sharma's Mewar and Mughal Ehtperors" का पृष्ठ 96 भी इसी बात की पुष्टि करता है। 1903 में प्रकाशित "Chiefs and Leading Families in Rajputana" के पृष्ठ 40 पर पानरवा परिवार की अक्षयराज से अर्जुनसिंह सोलंकी तक पूरी वंशावली दी हुई है।

राणा पूंजा के भील जाति में जन्म लेने के जानकारी इतिहास के किसी भी प्राथमिक स्रोत में दर्ज नहीं है। 1997 में जब के. आर. नारायण मूर्ति के अनावरण के लिए आने वाले थे तूब राणा पूंजा के वंशज पानरवा राजघराने के राणा मनोहरसिंह सोलंकी, महाराज रणधीर सिंह भिंडर, राव कर्णसिंह ओगना, राव हिम्मतसिंह नैनबारा, मेवाड़ क्षत्रिय महासभा के अध्यक्ष महेंन्द्रसिंह आगरिया एवं भूपाल नोबल संस्थान के भूतपूर्व छात्रसंघ अध्यक्ष तेजसिंह बांसी ने तत्कालीन मुख्यमंत्री से मिलकर पानरवा में मूर्ति स्थापना के विवाद के विषय में ऐतिहासिक तथ्यों के साथ अपनी मनोभावना स्पष्ट रूप से बताई थी। जो भी पत्र राष्ट्रपति, प्रधानमंत्री, गृहमंत्री, मुख्यमंत्री आदि को लिखे गए उन सभी पत्रों की प्रतिलिपियाँ आज भी मौजूद हैं।

पानरवा से निकले प्रधान सोलंकी ठिकानें हैं- ओगणा, उमरिया, आदीवास, गामड़ी, आंजरोली, अदकालिया, नयागांव, ढाला, अटवाल, ओड़ा, सांखला, दोबनेवज, सूरीमाला, बूरावाडा, कीतावतों का वास।

गुजरात के सोलंकी वंश-वृक्ष की बात करें तो-

मूलराज (960-995 ई.); चामुंडराज (995-1009); वल्लभराज (1009 ई.); दुर्लभराज (1009-1021 ई.); भीमदेव (1021-1063 ई.); कर्णदेव (1063-1093 ई.); सिद्धराज जयसिंह (1093-1142 ई.); कुमारपाल (1142-1173 ई.); अजयपाल (1173-1176 ई.); मूलराज दूसरा (1176-1178 ई.); भीमदेव दूसरा (1178-1242 ई.) त्रिभुवनपाल (1242-1243 ई.)। सोलंकियों की वघेल शाखा के बीसलदेव ने त्रिभुवनपाल (भुवनपाल) से गुजरात का राज्य छीन लिया। त्रिभुवनपाल गुजरात से निकलकर अजमेर की ओर आया और भिणाय (राण=राणक) इलाके में रहा। त्रिभुवन पाल की आगे की पीढ़ी में हैं- रणकदेव; कामड़देव; सारंगदेव; त्रिभुवन; देपा; भोज। भोज से पाता और गोड़ा। पाता के बाद त्रिभुवन, रायमल जिनके अधीन देसूरी क्षेत्र था। गोड़ा से सुल्तानसिंह और सुल्तानसिंह से अक्षयराज जिनके द्वारा पानखा में सोलंकी शासन की स्थापना हुई।

इस प्रकार रावत अक्षयराज से लेकर राणा मनोहरसिंह जी तक की 22 पीढ़ियों का पर्याप्त वर्णन मौजूद है जिसके अनुसार पानरवा के शासक सोलंकी राजपूत रहे हैं। इतिहास में पानरवा के सोलंकी राणा पूंजा के अलावा और कोई राणा पूंजा नजर नहीं आते।

अतः इस दुष्ट राजनीति के आवेश में आकर दोनों समाजों को अपने वर्षों पुराने मैत्री और सम्मान के भाव को नहीं मिटाना चाहिए। दोनों समाजों के प्रबुद्ध व सज्जन लोगों को साथ बैठकर इस असत्य को निराधार साबित करना चाहिए। राणा पूंजा सबके प्रेरणास्रोत है और अगर कोई भी जाति इन्हें अपनी प्रेरणा मानती है तो राजपूत जाति को इसमें कोई आपत्ति नहीं है।

जीवन भगवन्मय कैसे बने?

– जयदयाल गोयन्दका

समय बीता जा रहा है, हमारा जाना भी निश्चित है। कुछ भी साथ में नहीं जाएगा, केवल धर्म ही साथ में जाएगा। जब तक मृत्यु दूर है, देह में प्राण है तब तक जो करना हो सो कर लो, पीछे ऐसा मौका नहीं मिलेगा। यह तो परमात्मा की बड़ी दया है जो मनुष्य-शरीर मिलकर हम लोगों की धर्म में थोड़ी प्रवृत्ति हुई है। यह शरीर तो मिट्टी में मिलने वाला है। यह शरीर पाकर परमात्मा की प्राप्ति करनी है, ऐसा ध्येय बना लेना चाहिये। इसलिये सबकी सेवा करें। सबकी सेवा ही परमात्मा की सेवा है। **सर्वभूतहिते रताः–** यह बात भगवान ने मनुष्यों के लिये कही है, पशुओं के लिये नहीं। वह मनुष्य-शरीर आपको प्राप्त है, इसलिये आपको अपने उद्धार का प्रयत्न करना चाहिये, अन्यथा पछताना पड़ेगा।

जो न तरै भव सागर नर समाज अस पाइ।
सो कृत निन्दक मंदमति आत्माहन गति जाइ।।

इन सब बातों को सोचकर बड़ी तत्परता से हमको वही काम करना चाहिये, जिसके लिये हम आये हैं, यही सार बात है।

एक बड़ी महत्त्व और प्रभाव की बात बतायी जाती है। साक्षात् परमात्मा से बढ़कर कोई है ही नहीं, जब वे राम, कृष्ण के रूप में प्रकट हुए, तब उन्होंने क्या सिखलाया। श्री रामचन्द्र जी सारे संसार के पूज्य होते हुए भी ऋषियों के आश्रम में गये, उन्होंने सबका आदर किया, प्रणाम किया। उस प्रकार हम रुपये में पाई (एक पैसे में तीन पाई होती थी) भर भी नहीं कर सकते। क्या उनके लिये कुछ कर्तव्य था?

न मे पार्थास्ति कर्तव्यं त्रिषु लोकेषु किंचन।
नानवाप्तमवाप्तव्यं वर्त एव च कर्मणि।।

(गीता 3/22)

हे अर्जुन! मुझे इन तीनों लोकों में न तो कुछ कर्तव्य है और न कोई भी प्राप्त करने योग्य वस्तु अप्राप्त है, तो भी मैं कर्म में ही बरतता हूँ।

भगवान् ने ब्राह्मणों एवं ऋषियों के साथ कैसा उत्तम व्यवहार किया। जिस समय महाराज युधिष्ठिर ने यज्ञ किया, भगवान् श्री कृष्णचन्द्र जी ने पैर धोने का काम अपने जिम्मे लिया। उन्होंने सबको सिखाने के लिये ऐसा किया। सब लोगों के साथ भगवान् का कैसा व्यवहार था। शिशुपाल गालियाँ देता है, वे चुप ही रहते हैं। फिर भी गालियाँ देता ही रहा, भगवान् सहते ही रहे। अन्त में उसे अपने लोक में ही भेजा। उनमें कितनी शक्ति थी फिर भी काम क्या किया? ब्राह्मणों का चरण धोना। उन्होंने यह सिखाया कि तुम लोग भी ऐसा ही व्यवहार करो।

रामचन्द्र जी ने माता कैकेयी की आज्ञा का कैसा सुन्दर पालन किया। ऋषियों के आश्रम में गये इसमें केवल हम लोगों को शिक्षा देना ही हेतु है। वे कैसे दयालु हैं, जो कहते हैं कि जो मुझे सारे भूतों का सुहृद् जान जाता है वह भी परम शान्ति को प्राप्त हो जाता है, वह भी सारे भूतों का सुहृद् बन जाता है। भगवान् कहते हैं कि मैं साक्षात् परमात्मा सारे संसार का उद्धार करने के लिये प्रकट हुआ हूँ, फिर भी मूर्ख मुझे नहीं जानते। उस समय भी हम किसी न किसी रूप में थे ही, परन्तु उनको नहीं जाना, यदि जान जाते तो हमारी यह दशा नहीं रहती। अब जिस किस प्रकार हो, भगवान् को पहचानना चाहिये। पहचानना भी उनकी दया से ही होता है। अब सबसे उत्तम उपाय यही है कि हमारी यही चेष्टा हो कि हम प्रभु को कैसे जानें।

आप संसार में आनन्द देखते हैं, वह आनन्द नहीं है। यह तो उस परमात्मा के आनन्द की छाया मात्र है। परमात्मा का ही आश्रय लेना चाहिये। उन्होंने आपको बुद्धि

दी है। ऐश-आराम में अपने मन को लगाना अपने ऊपर कलंक लगाना है। ऐसे शरीर को पाकर यह श्लोक यदि आप धारण कर लें तो आपके लिये पर्याप्त है। त्रिलोकी का ऐश्वर्य एक ओर रखा जाय और उस श्लोक का एक शब्द एक ओर रखा जाय तो सारा ऐश्वर्य धूल के समान है। यदि सारे श्लोक को धारण कर ले तो वह पुरुष देवताओं द्वारा भी वन्दनीय है। वह श्लोक यह है-

मच्चित्ता मद्गतप्राणा बोधयन्तः परस्परम्।
कथयन्तश्च मां नित्यं तुष्यन्ति च रमन्ति च।।

(गीता 10/9)

निरन्तर मुझ में मन लगाने वाले और मुझ में ही प्राणों को अर्पण करने वाले भक्तजन मेरी भक्ति की चर्चा के द्वारा आपस में मेरे प्रभाव को जनाते हुए तथा गुण और प्रभाव सहित मेरा कथन करते हुए ही निरन्तर सन्तुष्ट होते हैं और मुझ वासुदेव में ही निरन्तर रमण करते हैं।

अपने प्रेमास्पद को पास समझकर उनके साथ वार्तालाप करना, कीर्तन करना यही रमण है। हमारी क्रिया से भगवान् प्रसन्न हो रहे हैं, उनकी प्रसन्नता से मैं प्रसन्न हो रहा हूँ। एक-दूसरे का यही ध्येय है कि यह प्रसन्न हो, एक-दूसरे के साथ प्रेम का दान है। यह सब लीला मानसिक है। इसका फल है भगवत्प्राप्ति।

तेषां सततयुक्तानां भजतां प्रीतिपूर्वकम्।
ददामि बुद्धियोगं तं येन मामुपयान्ति ते।।

(गीता 10/10)

उन निरन्तर मेरे ध्यान आदि में लगे हुए और प्रेमपूर्वक भजने वाले भक्तों को मैं वह तत्त्व ज्ञान रूप योग देता हूँ, जिससे वे मुझको ही प्राप्त होते हैं।

ऊपर के श्लोक में छः बातें बतायी। **'मच्चित्ता मगतप्राणा बोधयन्तः परस्परं'** यह विशेषण है। **'कथयन्तश्च'** यह भी विशेषण है। **'तुष्यन्ति रमन्ति'** क्रिया है। मुझ में ही रमण करते हैं। मेरे मित्रों यदि इसमें प्रवेश करके देखोगे तो कितना आनन्द भरा है। एक भी बात धारण कर लो कितना आनन्द है।

मच्चित्ता- कैसा चित्त होना चाहिये। जैसे मछली का चित्त पानी में बसता है, कामी का स्त्री में बसता है, लोभी का धन में बसता है। इसी प्रकार चित्त परमात्मा में बसना चाहिये। भगवान् में चित्त लगाने से ही उद्धार हो जाता है। गीता में प्रमाण है-

अनन्यचेताः सततं यो मां स्मरति नित्यशः।
तस्याहं सुलभः पार्थ नित्ययुक्तस्य योगिनः।।

(गीता 8/14)

हे अर्जुन! जो पुरुष मुझ में अनन्यचित्त होकर सदा ही निरन्तर मुझ पुरुषोत्तम को स्मरण करता है, उस नित्य-निरन्तर मुझ में युक्त हुए योगी के लिये मैं सुलभ हूँ, अर्थात् उसे सहज ही प्राप्त हो जाता हूँ।

फिर भगवान् ने पाँच बातें और क्यों बतायीं? अधिक करने से अधिक लाभ है। प्रेमी-भक्त केवल इतने से ही तृप्त नहीं होते।

मद्गतप्राणा- यह भाव है। भोजन, तप किसलिये करते हैं? भगवान् के लिये, हँसते क्यों हो? भगवान् के लिये, रोते क्यों हो? भगवान् के लिये, जिनकी सारी इन्द्रियों के द्वारा सारी क्रियायें भगवान् के लिये होती हैं।

बोधयन्तः- जिनका उद्देश्य भगवान् का तत्त्व एक-दूसरे को जनाने का रहता है, ऐसे प्रेमी भगवान् के तत्त्व की बात करते हैं। उनकी बात ही कौन कर सकता है। जो साधक भी ऐसा करते हैं, उनकी दशा भी नहीं बतायी जा सकती। ऐसे पुरुषों का मिलना भी कठिन है। यदि मिल जायँ तो उनके सामने मुक्ति, वैकुण्ठ भी कोई चीज नहीं है।

जिस समय गोपियाँ भगवान् की बातें करती थीं, उन्हें भगवान् की भी परवाह नहीं रहती थी। हम लोग भी इस तरह बात करें तो आनन्द का ठिकाना न रहे। यदि खूब प्रेम के साथ प्रेमी के साथ बात करें तो मुझे विश्वास है कि वहाँ भगवान् प्रकट हो जाते हैं। भगवान् के दो प्रेमी प्रेम की वार्तालाप करते हैं, नेत्रों में आनन्द प्रेम झूमने लगता है, उनकी बात सुने बिना भगवान् नहीं रह सकते।

ऐसी बात पुस्तकों में ही पढ़ी है। बड़ी विचार करने की बात है। हमारी आयु पचपन वर्ष की हो गयी, अभी तक कोई ऐसा व्यक्ति नहीं मिला, जिसके साथ वार्तालाप से भगवान् प्रकट हो जायें। मिले भी कैसे? हम योग्य हों तब तो।

इससे नीचे की बात बतायी जाती है। ऐसा अवसर भी नहीं आया। वार्तालाप करते-करते प्रेम में विभोर हो जाय, उससे तृप्त नहीं हो। समय कितना ही बीत जाय, अधीर न हो। रात बीत गयी, प्रातःकाल हो गया पता ही नहीं लगा। ऐसी एक भी रात नहीं बीती, कभी रात निकाली है तो ज्ञानपूर्वक ही निकाली है, यानि ऐसा नहीं हुआ कि प्रेम में विभोर होकर बीती हो। वास्तव में सच्चा प्रेमी मिल जाता तो प्रेम में बह जाते। लाचार हैं, परन्तु फिर भी आशावादी रहना चाहिये, निराश नहीं होना चाहिये। यह नहीं समझना चाहिये कि ऐसे पुरुष संसार में नहीं हैं। ऐसा प्रकरण तभी चल सकता है जब भगवान् की दया होती है।

विश्वास रखिये ऐसी बातें संसार में हैं, जिनके करने से रात बीत जाय पता ही नहीं लगे। भगवान् भी प्रकट हो सकते हैं, परन्तु हमको ऐसी बातें नहीं मिली फिर भी भगवान् का आश्रय लेकर प्रयत्न करना चाहिये। हम लोग कंचन-कामिनी के दास हो रहे हैं। उस तरह प्रभु के दास होते तो आनन्द आ जाता।

जिस समय उद्धवजी गोपियों के पास गये, कहा मुझे भगवान् ने तुम्हें ज्ञान देने के लिये भेजा है। वे कहती हैं क्या कभी वे आयेंगे, विभोर हो रही हैं। हम उनकी वास्तविक दशा नहीं जानते। जानें भी कैसे, वैसा प्रेम हमारे में नहीं है। जब भरतजी की कथा पढ़ते हैं नेत्रों में आँसू आ जाते हैं। उनका कैसा अलौकिक भाव है?

कथयन्तः – इसकी कितनी महिमा है। वे ही पुरुष धन्य हैं जिनका सारा समय भगवान् के गुणानुवाद में बीतता है। वे प्रभु में ही रमण करते हैं। रात-दिन उनका मन प्रभु में रमता है, वाणी के ऊपर प्रभु की महिमा ही वास करती है। उनका ही जीवन सफल है। इसी तरह हम भी भगवान् से यही चाहें कि आपके साथ हम अनन्य प्रेम चाहते हैं। यही भीख माँगते हैं यही प्रार्थना करते हैं कि आपको एक क्षण भी नहीं भूलें। आपकी माया प्रबल है, आप ही इससे बचाइये। भगवान् भी स्वीकार करते हैं-

दैवी ह्येषा गुणमयी मम माया दुरत्यया।
मामेव ये प्रपद्यन्ते मायामेतां तरन्ति ते।।

(गीता 7/14)

क्योंकि यह अलौकिक अर्थात् अति अद्भुत त्रिगुणमयी मेरी माया बड़ी दुस्तर है; परंतु जो पुरुष केवल मुझको ही निरन्तर भजते हैं वे इस माया को उल्लंघन कर जाते हैं अर्थात् संसार से तर जाते हैं।

भगवान् लक्ष्य करा रहे हैं चाहो तो शरण हो जाओ। माया इतनी दुस्तर होने पर भी जो भगवान् के शरण हो जाता है वह माया को लाँघ जाता है। **'तुष्यन्ति च रमन्ति च'** उसी में रमण करते हैं। अभी भगवान् मिले नहीं हैं इसका फल भगवान् का मिलना है।

आप थोड़े दिन एकान्त में बैठकर प्रभु की मोहिनी मूर्ति को देखें, उसको मन से पास में देखें, अभी वह आँखों से नहीं दीखते। इसमें भी रहस्य है कि वे तुम्हें अपनी ओर लुभाते हैं, किन्तु तुम यह समझो कि वे मुझे देख रहे हैं। हम उन्हें नहीं देख सकते। एक बार भी उनका मुखारविन्द देख लेंगे तो मोहित हो जायेंगे। उनके नेत्रों में जादू भरा है, शान्ति, कोमलता का भण्डार भरा है।

जब वे देखते हैं तो इन सब पदार्थों का हमारे ऊपर स्रोत बहा देते हैं। भगवान् के नेत्रों से इन गुणों का स्रोत बहने लगता है, वह फिर अपने आपको भुला देता है। प्रेम की मूर्ति बन जाता है, प्रेम प्रदान करने वाले भगवान् को भी प्रेम देने वाला बन जाता है। वास्तव में जिसकी ऐसी स्थिति है, वह प्रणाम करने योग्य है। सुतीक्ष्ण की दशा देखो। हम लोगों को प्रार्थना करनी चाहिये, क्या कभी ऐसी दशा हमारी भी होगी।

(शेष पृष्ठ 26 पर)

घावों को आभूषण मानने वाले योद्धा राणा सांगा

– डॉ. मातुसिंह मानपुरा

संघर्ष सृष्टि का शास्वत नियम है। 'जीव जीवस्य भोजनम्' का सिद्धान्त उत्पत्ति, पालन और नियमन तक चलता रहता है। मरुभोम राजस्थान में संघर्ष के बिना जीवन को व्यर्थ माना गया है। विदेशों से आने वाले आक्रान्ताओं को परास्त करने हेतु जितने युद्ध भू-भाग पर हुये हैं शायद अन्यत्र नहीं हुये होंगे। यहाँ के योद्धा सनातन धर्म के लिये सुरक्षा कवच बनकर खड़े रहे। राक्षस वृति की जातियों ने रास्ता बदल-बदल कर आक्रमण किये तो भी प्राणीमात्र की रक्षार्थ प्राणों की आहुति देने वाले क्षत्रिय योद्धा भारत भूमि के रक्षा कवच के रूप में प्रस्तुत हुये। सिर कटने पर भी धड़ लड़ते रहे। प्रत्येक योद्धा के शरीर पर अनगिनित घाव उसकी प्रतिष्ठा के आभूषण थे। घावों के लिये इतिहास प्रसिद्ध ऐसे ही सर्वश्रेष्ठ योद्धाओं में महाराणा सांगा का नाम अग्रिम पंक्ति में सुशोभित है।

27 वर्ष की अवस्था में अपने पिता महाराणा रायमल की मृत्यु के पश्चात् 24 मई, 1509 को मेवाड़ के महाराणा बने। सांगा नाम से इतिहास प्रसिद्ध इस अद्वितीय योद्धा की सेना में एक लाख योद्धा और पांच सौ हाथी थे। अपने पुरुषार्थ से मेवाड़ राज्य को उन्नति के शिखर पर पहुँचाने वाले महाराणा सांगा के अधीन सात बड़े राजा, नौ राव और 104 रावत थे। 18 वर्ष तक राज्य करने वाले इस प्रतापी महाराणा ने लगभग 20 से अधिक युद्धों में भाग लिया था। इनके शरीर पर तलवारों एवं भालों के 80 से अधिक घाव लगे हुये थे। एक ऐतिहासिक पंक्ति है- 'जिनके घाव लगे नवासी, फिर भी खड़ग रही थी प्यासी'। अपनी शक्ति से दुश्मनों को भयभीत करने वाले प्रतापी महाराणा जीवन पर्यन्त युद्धों में ही व्यस्त रहे। खानवा के युद्ध से पूर्व 18 बड़ी लड़ाइयों में इन्होंने विजय प्राप्त की थी। दिल्ली के शासक इब्राहिम लोदी द्वारा किए गये दो आक्रमणों में उसे मुँह तोड़ जवाब दिया जिससे उसने पुन: मेवाड़ पर आक्रमण करने का साहस नहीं किया। युवावस्था में ही एक आँख खोने वाले संघर्ष प्रिय महाराणा का खातोलिया गाँव के पास इब्राहिम लोदी के साथ सन् 1517 ई. के युद्ध में एक हाथ तलवार से कट गया और एक पाँव में तीर लगने से लंगड़े हो गये लेकिन उनके वीरतापूर्ण युद्ध कौशल में कमी नहीं आयी थी। दिल्ली के लोदी एवं गुजरात के बेगड़ा तथा मालवा के खिलजी शासकों को युद्ध में बार-बार परास्त किया। साधारण जनता को मौत के घाट उतारने एवं मन्दिरों को ध्वस्त करने वाले इन शासकों की संयुक्त सेना को भी महाराणा ने युद्ध में परास्त किया था। मालवा के सुल्तान महमूद द्वितीय को सन् 1519 में युद्ध में परास्त कर उसे पकड़ लिया लेकिन उसे बिना दण्ड दिये ही छोड़ दिया था। इसी प्रकार मांडू के सुल्तान को भी गागरोन के युद्ध में कैद कर तीन माह तक चित्तौड़ में रखा तथा बाद में फौज खर्च लेकर मांडू पहुँचा दिया।

महाराणा सांगा का अन्तिम युद्ध दिल्ली के प्रथम मुगल शासक बाबर के साथ 17 मार्च,, 1527 ई. को बयाना (भरतपुर) के पास खानवा नामक स्थान पर हुआ। अपनी सेना के पीछे सुरक्षित स्थान पर बैठे बाबर ने सेना के सबसे महत्त्वपूर्ण सैनिक दल को लड़ने के लिये आगे प्रस्तुत किया, जिसे महाराणा की सेना के द्वारा काट डाला गया। राणा सांगा के सैनिकों के उत्साह एवं युद्ध कौशल को देखकर मुगल सैनिक भयभीत व निराश हो गये, वह युद्ध करने को तैयार नहीं थे लेकिन बाबर ने उन्हें प्रोत्साहित करने के लिये स्वयं ने ही कई प्रकार की प्रतिज्ञाएँ की तथा अपने सैनिकों से भी प्रतिज्ञाएँ करवायी व कई प्रकार के लालच दिये। चार भागों में सेना को

विभाजित कर युद्धों के अनुभवी महाराणा सांगा हाथी पर बैठकर स्वयं सैन्य संचालन कर रहे थे। मुगल सेना कट रही और पीछे हट रही थी लेकिन अचानक सिर में तीर लगने से महाराणा मूर्छित हो गये और उन्हें पालकी में लिटाकर जयपुर राज्य के गाँव बसवा ले जाया गया।

हाथी पर उनकी जगह अन्य को बैठाकर युद्ध लड़ा गया लेकिन मेवाड़ महाराणा के नेतृत्व में लड़ने वाली शक्तिशाली सेना कुसंयोग से परास्त हो गयी। युद्ध में विजय होने पर भी बाबर ने आगे बढने का साहस नहीं किया। मूर्छा टूटने पर महाराणा क्रोधित हुये, उन्हें युद्ध मैदान से हटने का दु:ख हुआ और उन्होंने प्रतिज्ञा की कि जीते जी चित्तौड़ नहीं जाऊँगा। महाराणा ने पुन: युद्ध की तैयारी का आदेश दिया लेकिन उनके सलाहकार एवं सेनापति इस निर्णय से सहमत नहीं थे। राणा सांगा के अधिक हठ करने पर उन्हें विष दिया गया। अद्वितीय योद्धा, संगठनकर्ता एवं घावों को आभूषण मानने वाले यशस्वी महाराणा का 30 जनवरी सन् 1528 को मात्र 46 वर्ष की अवस्था में काल्पी में देहान्त हो गया और रह गयी उनकी अविजित मनोभावना–

मिटे तो हुआ क्या, निशानी है बाकी।
कथाकार सोये, कहानी है बाकी।।

●

पृष्ठ 24 का शेष

जीवन भगवन्मय कैसे बने?

यह बात कही ही जाती है बीती हुई नहीं है, परन्तु हम लोगों को इस दशा के लिये छटपटाना चाहिये। जब हम एक क्षण भी उनके बिना नहीं रह सकेंगे तो वे भी हमारे बिना रह नहीं सकेंगे। भगवान् कहते हैं–

ये यथा मां प्रपद्यन्ते तांस्तथैव भजाम्यम्।

(गीता 4/11)

जो भक्त मुझे जिस प्रकार भजते हैं, मैं भी उनको उसी प्रकार भजता हूँ।

यो मां पश्यति सर्वत्र सर्वं च मयि पश्यति।
तस्याहं न प्रणश्यामि स च मे न प्रणश्यति।।

(गीता 6/30)

जो पुरुष सम्पूर्ण भूतों में सबके आत्मरूप मुझ वासुदेव को ही व्यापक देखता है और सम्पूर्ण भूतों को मुझ वासुदेव के अन्तर्गत देखता है, उसके लिये मैं अदृश्य नहीं होता और वह मेरे लिये अदृश्य नहीं होता।

प्यारे मित्रों! हमारे पूज्यवरों! ऐसी अवस्था मनुष्यों की ही होती है पशुओं की नहीं। आप ख्याल करें जिस समय ऐसी अवस्था आपकी हो जाएगी, उस समय कैसा आनन्द होगा? आशा रखनी चाहिये कि ऐसी अवस्था हो सकती है। हम लोगों को विलम्ब हो रहा है। उसका कारण यह है कि श्रद्धा नहीं है। विश्वास रखना चाहिये, पापी भी धर्मात्मा बन सकता है। भगवान् ने कहा है मैं ऐसे प्रेमी-भक्तों के पीछे घूमता फिरता हूँ। प्यारे मित्रों! हमको भगवान् का ऐसा ही भक्त बनना चाहिये।

जो कुछ बात कही जाती है, आपके प्रेम के कारण ही कही जाती है। इन सब बातों से भगवान् की प्राप्ति होती है, कथन भी आप लोगों की दया से ही होता है, इसलिये वक्ता को अपने आपको श्रोता का ऋणी समझना चाहिये। रात-दिन हमारा समय भगवच्चर्चा में ही बीते। भगवान् से भी यही प्रार्थना करें, रात-दिन आपका गुणानुवाद करते रहें, हमको यह ज्ञान न रहे कि कितना समय बीत गया है। हम ऐसी इच्छा करें कि हमें अनन्यभक्ति प्राप्त हो, फिर हम ऐसे बन जायँ कि जिस मार्गसे चलें उस मार्ग में प्रेम आनन्द का स्रोत बह जाय, हमारे में प्रेम आनन्द के फौवारे छूटें ऐसी परिस्थिति हो जाय। प्रेम में ऐसे विभोर होकर संसार में विचरें।

श्री तनोट राय माताजी

– भंवरसिंह मांडासी

तणू भूप तेड़ाविया, आवड़ निज अेबास।
पूजा ग्रही परमेश्वरी, नमो थायो निवास।।

पश्चिमी राजस्थान के पाकिस्तान की सीमा से सटा प्राचीन गढ़, 'तनोट' जैसलमेर के ही नहीं, भारत के इतिहास में विशेष स्थान रखता है। जैसलमेर से 120 कि.मी. रामगढ़ रणाऊ मार्ग पर स्थित तणोट की स्थापना तणुराव भाटी ने वि. सं. 887 के लगभग की। कहा जाता है कि भक्त प्रजापालक व धर्मात्मा राजा के आमन्त्रण पर महामाया अपनी सातों बहिनों सहित तनोट पधारी थी। आस्था व श्रद्धा भाव से राजा ने इनके मन्दिर की स्थापना की। यह मंदिर वर्तमान में बी.एस.एफ., जैसलमेर राजघराने सहित जनमानस के आस्था का केन्द्र है।

तनोट नगरी भाटी साम्राज्य की प्रथम राजधानी के रूप में भी जानी जाती है। जैसलमेर की ख्यात के अनुसार तन्नुराय के पिता राजा केहर की झाली रानी को तणुरिया देवी ने स्वप्न में दर्शन देकर आदेश दिया कि अपने पुत्र का नाम तणू रखना तथा मेरे नाम पर नगर बसाकर मेरे मंदिर का निर्माण करवाना जिससे तुम्हारे यश और गौरव की उत्तरोत्तर वृद्धि होगी। देवी के आदेश को शिरोधार्य कर तन्नोट नगर बसाकर देवी के मंदिर का निर्माण कराया।

इस स्थल से तीन जय नाम पुरुषों का विशेष सम्बन्ध रहा है। भाटी राजा विजयराज प्रथम माता का परम भक्त था। इनके शासनकाल में सिंध के मुस्लिम आक्रान्ता ने विशाल सेना लेकर आक्रमण कर दिया। संकट में विजयराज ने माता के समक्ष प्रार्थना की कि वे इस युद्ध में उसे विजय दिलवा दें तो वह देवी की कृपा के प्रति कृतज्ञता प्रगट करते हुए अपना मस्तक चरणो में समर्पित कर देगा। माता की अनुकम्पा से विजयश्री हासिल हो गई। राजा अपने वचन को निभाते हुए मस्तक अर्पित करने देवी के मन्दिर पहुँचे और कमल पूजा मस्तक के लिए प्रस्तुत हुए। कमल पूजा के अन्तर्गत अपने हाथ से अपना सिर काटकर देवी के चरणों में समर्पित करना होता है। जैसे ही विजयराज ने तलवार उठाकर अपना मस्तक काटने का प्रयास किया वैसे ही आकाशवाणी हुई– नहीं! नहीं!! विजयराज ने इधर-उधर देखा। कुछ भी नहीं दिखाई देने के उपरान्त पुनः तलवार उठाकर अपनी गर्दन पर वार करने लगे। उसी समय देवी साक्षात् प्रकट हुई और कहा– ''मैंने तुम्हारी पूजा स्वीकार कर ली है। मैं तुमसे बहुत खुश हूँ।'' विजयराज देवी के चरणों में नत-मस्तक हो गया। देवी ने विजयराज को अपने हाथों की चूड़ (कवच) निकालकर दी और कहा– ''जब भी तुम्हारे ऊपर आक्रमण हो, इस कवच को हाथों में धारण कर लेना। इससे एक हजार तलवारें एक साथ चलने लगेंगी। मैं स्वयं तुम्हारे अश्व के कनौती के बीच चिड़िया बनकर बैठी रहूँगी, जिससे सदैव तुम अजय रहोगे।'' इसी दिन से माता 'विजयासना' नाम से तथा विजयराज 'चूड़ाला' विजयराज के नाम से प्रसिद्ध हुए।

जैसलमेर के राज्य चिह्न में भी उक्त दृश्य ही अंकित किया गया है। आजादी से पूर्व तक जैसलमेर के शासक पर्व-आदि पर सजाये अश्वों पर चाँदी-सोने की चिड़िया बनाकर शक्ति के प्रतीक के रूप में बैठाकर पूजा करते थे। जैसलमेर के सिक्कों, पट्टों-परवानों, स्टाम्पों, तोरणों आदि पर भी शकुन चिड़ी व मेघाडम्बर छत्र की आकृतियों का अंकन मिलता है। विजयराज चूड़ला ने वीजणोट, देवराज ने देरावर तथा विजयराज लंझा ने बीजड़ासर नामक सरोवर पर तनोटराय माता का मन्दिर निर्माण करवाया था।

तणोट विजणोत तू, दुग्रेश कोट लुध्रवे।
गिटयो घंटाल गढ़, पाल आल माल उद्रवे।।
भेट्यो भूपाल भादरिये, रूद्राल देग रावड़ा।
भज्य निशुम्भ शुम्भ भूप, आप रूप आवड़ा।।

सन् 1965 में लेफ्टिनेंट कर्नल जयसिंह थैलासर के समय एवं 1971 में लौंगेवाला की भूमि में युद्ध हुए। इन युद्धों में माताजी की कृपा से विजयश्री प्राप्र हुई। सन् 1965 एवं 1971 के मरु समरागण में भारत के युद्धों का

इतिहास के स्वर्णिम पृष्ठों पर अपना नाम अंकित करने वाले वीर शीरोमणि लॉरेन्स ऑफ थार जयसिंह राठौड़ थे।

सन् 1965 के युद्ध में 13 ग्रेनेडियर्स (गंगा रिसाला) की चार कम्पनियों को मरुस्थल के अलग-अलग क्षेत्रों की रक्षा करने भेजा गया। 'ए' कम्पनी मेजर (कर्नल) हरिसिंह व जुगतसिंह पूगल 'बी' कम्पनी मेजर (कर्नल) जयसिंह तणोट, 'सी' कम्पनी मेजर पूर्णसिंह, रिजर्व सैक्टर तथा 'डी' कम्पनी मेजर (कर्नल) बलदेवसिंह को बाड़मेर सीमान्त क्षेत्र की रक्षा का दायित्व सौंपा गया।

16 नवम्बर, 1965 को पाकिस्तान ने हवाई जहाज से इस स्थल की जानकारी ली तथा 17 नवम्बर को पहला आक्रमण किया। तनोट पर भारी आक्रमण से पार्श्व से सम्बन्ध कार दिया गया तथा शत्रुओं की आठ कम्पनियों ने विभिन्न दिशाओं से भयंकर आक्रमण किये। यह कर्नल जयसिंह के सूझ, धैर्य, साहस, वीरता और रजपूती शौर्य-पराक्रम की परीक्षा का समय था। तनोट में 48 घंटे तक गोलाबारी होती रही। कर्नल जयसिंह थेलासर ने तनोट की स्कवार्डन और उस समय आर. ए. सी. (वर्तमान बी.एस.एफ.) की दो कम्पनियों को अपना नेतृत्व देते हुए अत्यन्त साहस एवं धैर्य से शत्रु के अनेक सैनिक हताहत किये। माता की अनुकम्पा से भारतीय सपूतों का विजयश्री ने वरण किया तथा भारत के प्रमुख समाचार पत्रों में इस वीरोचित कार्य की भूरि-भूरि प्रशंसा की गई। राठौड़ कर्नल जयसिंह का कृत्य इतिहास के स्वर्णाक्षरों में अंकित किया गया। माता की अनुकम्पा से न मंदिर के नुकसान हुआ और न ही बम फटे। वे बम आज भी मन्दिर में साक्ष्य स्वरूप में मौजूद हैं।

सन् 1971 के युद्ध पर बनी फिल्म 'बॉर्डर' युद्ध के नायक कुलदीपसिंह चांदपुरी के शौर्य, पराक्रम व सूझबूझ को उजागर करती है। पाकिस्तान के तीन हजार सैनिक और भारत के मात्र 120 सैनिकों की टुकड़ी चौकी पर तैनात थी तथा दो एंटी टैंक, आर सी एफ गन थी।

भारतीय नौजवानों ने प्रथम आक्रमण को नाकाम कर दिया। साढ़े चार बजे हमले ने उग्र रूप ले लिया। उस समय सूबेदार रतनसिंह व इक्कीस सैनिकों की टुकड़ी पर हमला हुआ। खानसामे के सिपाही बागसिंह को भी बन्दूक उठानी पड़ी। सिपाही जगजीतसिंह पर हमला हुआ और वे वीरगति को प्राप्त हुए। सिपाही बिशनाराम ने भी मातृभूमि की रक्षार्थ प्राणों का उत्सर्ग किया। तत्पश्चात् धर्मवीर भी युद्ध में काम आए। इस प्रकार कुल पाँच सैनिकों ने देश की खातिर अपना सर्वस्व हवन कर दिया।

टैंकों की जानकारी व पाकिस्तानी सेना की योजना सुबह का नाश्ता जैसलमेर, दोपहर का भोजन जोधपुर एवं शाम का डीनर दिल्ली करने की जानकारी न होती तो न जाने क्या स्थिति होती है? भारतीय लड़ाकू विमान रात्रि में आक्रमण करने की स्थिति में नहीं थे। प्रातः सूर्योदय की प्रथम किरण के साथ भारतीय वायु सैनिकों ने शत्रु पर निशाना साधना प्रारम्भ कर दिया। शत्रु अपनी तोप, मोर्टार तोपें, गाड़ियाँ तथा सामान छोड़कर भाग गये। सैंकड़ों की संख्या में शत्रु काल का ग्रास बना तनोट माता की कृपा से भारतीय जवानों ने इन्हें गब्बर चौक तक धकेल दिया।

माड धरा का आस्था केन्द्र बना तनोट राय का मन्दिर जनमानस में रचा बसा है। जनमानस के साथ ही भारतीय सैनिक भी इसकी पूजा करते हैं, इसीलिए इन्हें 'सैनिकों की देवी' नाम से भी जाना जाता है। सेना की विशेष कम्पनी जहाँ भी रहती है, मैया का छोटा मन्दिर सदैव उनके साथ-साथ रहता है। अलग से पुजारी की व्यवस्था होती है। नियमित पूजा-अर्चना की जाती है। शाम के समय सदैव भजन-कीर्तन किया करते हैं। नवरात्रि के दिनों में यहाँ विशेष चहल-पहल होती है।

आदिकाल से शक्ति उपासना की परम्परा अनवरत् चलायमान है। मानव इन्हें रक्षक मानकर पूजन-अर्चन करता आया है। इष्ट प्राप्ति और अनिष्ट निवारण की भावना के साथ सश्रद्धा उपासना-आराधना की जाती है। क्योंकि विश्व के मूल में परम तत्त्व स्वरूप में शक्ति ही प्रतिष्ठापित है। शक्ति के बिना शिव भी असहाय है। बिना शक्ति नहीं हो सकती अनुरक्ति। इस भावना के साथ तणोट राय माता का कोटि-कोटि वन्दन ।

सब सगत्या इकसार है, वध घट नको विचार।
समै देश अनुसार ही, इला हुवै अवतार।।

बंटोगे तो कटोगे

– गुमानसिंह धमोरा

आज पुराना तथ्य नवीन कलेवर में उभर रहा है। ''बंटोगे तो कटोगे'' जो वस्तुत: आज भी उतना ही सही है जितना पहले कभी था। पुरातन है किन्तु नये रूप में भी उतना ही सटीक है। हमने तो बहुत पहले कहा है–'संघे शक्ति कलोयुगे'। कलियुग ही नहीं, 'युगे युगे' जो सनातन सत्य है।

हाँ कलियुग में केवल और केवल संगठन ही शक्ति है। अन्य युगों में भी संगठन शक्ति थी किन्तु शक्ति अन्य साधनों में निहित थी। सतयुग में वरदान और श्राप रूप में थी, त्रेता में शारीरिक शक्ति का महत्त्व था–श्रीराम इसके उदाहरण हैं। द्वापर में चतुराई व प्रबन्धन शक्ति का रूप था–श्रीकृष्ण इसके उदाहरण हैं। कलियुग में हम देख रहे हैं अन्य शक्तियों का महत्त्व विलुप्त प्राय हो गया है। बची है तो केवल 'संघशक्ति', 'एकता', 'सम्प'।

हमारे समाज में हमेशा एकता का अभाव रहा है, एक झण्डे के नीचे हम कभी नहीं आये और जिसका परिणाम हमने समय-समय पर भुगता है। इसका मूल कारण अहम् की भावना की अधिकता रहा है–''मैं किससे कम'' वाले दम्भ ने संघशक्ति के महत्त्व को पनपने ही नहीं दिया। और हम बंटते रहे कटते रहे। आज भी कमोबेस यही दम्भ हमारे आर्थिक, सामाजिक, वैचारिक, आध्यात्मिक व राजनीतिक स्थितियों पर प्रभाव डाल रहा है। एक दूसरे की पगड़ी उछालना हमारा स्वभाव बन गया है, जो हमें 'संघशक्ति' का लाभ नहीं लेने दे रहा।

कई ऐसे समुदाय हैं जिन्हें जन्म से ही सिखाया जाता है कि 'बंटोगे तो कटोगे' यानी एकता नहीं रखोगे तो अस्तित्व ही समाप्त हो जाएगा। परिणामस्वरूप एक के साथ घटना (सही हो चाहे गलत) घटने पर एक आवाज पर समूह का समूह इकट्ठा हो जाता है। इस संघशक्ति को देखकर कानून भी दुबक जाता है, सरकार भी डर जाती है। परिणाम जैसा वो चाहते हैं कर गुजरते हैं। हम नहीं चाहते कि 'संघशक्ति' का दुरुपयोग हो, सदुपयोग करने की आवश्यकता तो है ही। यही नियम 'बंटोगे तो कटोगे' देश, समाज, जाति, कुटुम्ब व परिवार पर लागू होता है।

राजस्थानी भाषा में एक कहावत है जिसका आशय है–
**''एक लाठी ऐकलो, दोय लाठी पंच और तीन लाठी सरपंच।
जिसके घर में चार लाठी वो पंच गिणै न सरपंच।।''**

यह उदाहरण उदण्डता दर्शाता है लेकिन एकता की तरफ तो इशारा करता ही है।

कुछ अर्से पूर्व हमारे में से ही एक 'देव पुरुष' ने 'संघशक्ति' का महत्त्व समझ, इसका बीजारोपण ''क्षत्रिय युवक संघ'' के रूप में किया। जो नन्हें पौधे के रूप में पैदा होकर वट वृक्ष तो नहीं बना है किन्तु अच्छा खासा किशोर रूप में तो आ ही गया है, जो उन्हीं 'देव पुरुष' स्व. श्री तनसिंह जी की सौवीं जयन्ति पर दिल्ली में अनुसाशित समूह सागर रूप में देखने को मिला। इससे पूर्व श्री क्षत्रिय युवक संघ की ही 'हीरक-जयन्ति' के अवसर पर जयपुर में जो विशाल, व्यवस्थित व अनुशासित कार्यक्रम सम्पन्न हुआ, उसने देव पुरुष की कल्पना का बढता रूप प्रकट किया।

आज हमें अगर अहंकार करने से बचना है तो 'संघशक्ति' के महत्त्व को नजरअंदाज नहीं करना चाहिए। ''क्षत्रिय युवक संघ'' सद्मार्ग का रास्ता है, इसके बताये मार्ग का अनुसरण करना हमारा कर्तव्य बनता है।

चेतावनी : अगर कटना (विनाश) है तो सोये रहिये बचना है तो जागना होगा।

●

महान विजेता महाराव सुरताण देवड़ा

– डॉ. उदयसिंह डिंगार

महाराव सुरताण देवड़ा सिरोही नरेश, जो कि आज़ादी के महानायक मेवाड़ के महाराणा प्रताप एवं मारवाड़ के महानायक महाराव चंद्रसेन के समकालीन एवं उनके प्रबल सहयोगी थे। उन्होंने अपने तलवार के बल पर अल्पायु में ही वीरता का इतिहास रचने में कामयाबी हासिल की थी। महाराव सुरताण का जन्म विक्रम संवत् 1616 तदनुसार सन् 1559 ईस्वी में सिरोही राज्य के नंदीवर्धनपुर, जिसे वर्तमान में नांदिया कहा जाता है, वहाँ के सामन्त भाण देवडा के यहाँ हुआ था। इनके पिता महादेव के परम भक्त थे, वे भजनी भान के नाम से भी प्रसिद्ध थे। बचपन से ही महाराव सुरताण कुशल तीरंदाज थे। यह उक्ति प्रसिद्ध है कि–

पर्वत जतरो प्रमाण, नख जतरो अंजस नहीं,
तरा सहजा सुरतान विंदो भान नरंद वत।

सिरोही राज्य के तत्कालीन शासक महाराव मानसिंह के कोई राजकुमार नहीं होने से नांदिया के इन्हीं सुरताण को सिरोही राज्य की राजगद्दी पर बिठाया गया। उनके लिए कहा जाता है कि 51 वर्ष के जीवनकाल में उन्होंने 52 युद्ध जीते थे। यह उक्ति प्रचलित रही है कि :

वर्ष इकावन जीवियो अनाड,
बावन जीतियो महाराड!

सन् 1576 ईस्वी के इतिहास प्रसिद्ध हल्दीघाटी युद्ध के पश्चात महाराणा प्रताप के जंगल जंगल आजादी की अलख जगाते हुए मुगलों का डटकर सामना करने के उस विषम संघर्षशील काल में महाराव सुरताण देवड़ा ने महाराणा प्रताप एवं राव चंद्रसेन का साथ निभाकर आजादी की ज्योति में ऐसा योगदान दिया जो इतिहास में सदैव स्मरणीय रहेगा। इतिहास साक्षी है कि महाराणा प्रताप के वन गमन के दौरान महाराव सुरताण ने प्रताप का सहयोग कर उन्हें आबू की दुर्गम पहाड़ियों में रहने का निमंत्रण देकर प्रताप का पूर्ण सहयोग किया। इतना ही नहीं, तत्कालीन समय में जोधपुर के राव चंद्रसेन राठौड़ के स्वतन्त्रता संघर्ष में भी महाराव सुरताण ने साथ दिया था। सिरोही नरेश महाराव सुरताण के स्वतन्त्रता की ज्योति में साथ देने, गृह कलह की विषम परिस्थितियों एवं सिरोही पर मुगल सत्ता स्थापित करने के विविध कारणों, देशकाल एवं परिस्थितियों के फलस्वरुप मुगल बादशाह अकबर ने सिरोही पर आक्रमण का आदेश दिया था। अति विशेष तथ्य है कि सिरोही के शासक महाराव सुरताण देवडा ने तत्कालीन समय में महाराणा प्रताप एवं राव चंद्रसेन जोधपुर नरेश की सहायता कर भारत के इतिहास में स्वर्णिम अक्षरों में अंकित करने योग्य कार्य किया था। महाराव सुरताण का यह गौरवमय इतिहास रहा कि देश की केन्द्रीय शक्ति से शत्रुता लेते हुए राजपूताने के स्वतंत्रता सेनानियों की अग्रिम पंक्ति में स्वयं को खड़ा कर मुगल सत्ता का डटकर सामना किया था, साथ ही पड़ोसी शासकों महाराणा प्रताप एवं राव चन्द्रसेन का भी साथ दिया था, परन्तु इस महान विजेता, स्वतन्त्रता के महानायक को इतिहास में उचित स्थान नहीं मिला। विषम कारणों, परिस्थितियों के कारण दिल्ली के बादशाह अकबर ने महाराणा प्रताप के लघु भ्राता राणा जगमाल, जो कि सिरोही के दामाद थे एवं जोधपुर के रायसिंह के नेतृत्व में एक सेना सिरोही पर आक्रमण करने हेतु भेजी। मुगल सेना के सिरोही आक्रमण के दौरान महाराव सुरताण ने आबू पर मोर्चा संभाला, वहीं मुगल सेना ने आबू के दक्षिणी क्षेत्र दत्ताणी में सैन्य पड़ाव किया। महाराव सुरताण ने मुगल सेना से आर पार के संघर्ष का निर्णय लिया। 17 अक्टूबर, 1583 ईस्वी देवोत्थान एकादशी के दिन प्रातः काल महाराव सुरताण की सेना ने दत्तामी रण खेत में मुगल सेना पर आक्रमण कर दिया। भयंकर युद्ध हुआ जिसमें मुगल सेना को पराजित होना

पड़ा। मुगल सेना के दोनों सेनापति इस युद्ध में काम आए एवं शाही सेना को पराजय का मुंह देखना पड़ा। मुगल सेना की पराजय एवं महाराव सुरताण की विजय इतिहास प्रसिद्ध है। जिसमें सिरोही राज्य के सेनापति समर सिंह देवड़ा डूंगरावत की रणभूमि में गौरवपूर्ण वीरगति हुई ।

सिरोही के महाराव सुरताण को विजय की बधाई देते हुए रणभूमि में उपस्थित राष्ट्रीय कवि दुरसा आढा ने इन शब्दों में दी, जो इतिहास प्रसिद्ध है–

नंदगिरी नरेश कटार बद्ध चौहान
दत्तानी खेतरा जैत जोहार।

दत्ताणी की रणभूमि में अदम्य साहस, अद्भुत वीरता के साथ रणभूमि में सिरोही राज्य को विजय दिलवाकर वीरगति को प्राप्त,, बलिदान की अमर गाथा रचने वाले सिरोही राज्य के सेनापति समर सिंह देवड़ा डूंगरावत की शहादत पर राष्ट्र कवि दुरसा आढा की वाणी इस प्रकार फूट पड़ी–

धर रावा, जस डूंगरा, बद्र पोत्र शत्रुहाण
समरे मरण सुधारियो, चहुं थाका चौहान

इस सिरोही राज्य की इस गौरवशील जीत, दत्ताणी युद्ध एवं उसमें महाराव सुरताण की इस महान और गौरवशाली विजय को इतिहास में उचित स्थान नहीं मिला, यह एक विचारणीय प्रश्न है। स्वतंत्र भारत में जहां इस ऐतिहासिक धरोहर के संरक्षण एवं विश्व मानचित्र पर उचित स्थान की महती आवश्यकता है, किंतु यह दुर्भाग्य है कि अनदेखी का शिकार दत्ताणी रण खेत आज भी गौरवशाली विजय एवं अतीत की गौरव गाथा को अपने आंचल में समेटे हुए आंसू बहा रहा है। महाराणा प्रताप एवं महाराव सुरताण देवड़ा के स्वतंत्रता संघर्ष का प्रतीक यह दोहा अत्यंत प्रसिद्ध रहा है कि उन्होंने मुगल सत्ता के समक्ष अपना मस्तक नहीं झुकाया एवं स्वतंत्रता तथा स्वाभिमान के प्रतीक बने रहे।

अवरनृप पतशाह अगे, होय नृप जोड़े हाथ
नाथ उदयपुर नी नम्मो, नम्मो नी अरबुदनाथ

अर्चना अधिकार मेरा

जल रहा दीपक किसी के, प्यार का आधार पाकर।
शलभ के अनुराग ने ही, दीप को जलना सिखाया।
वर्त्तिका का त्याग ही तो, तिमिर में आलोक लाया।
ज्योति उज्ज्वल जागरित है, नेह का उपहार पाकर। जल रहा.....

एक प्रिय सुधि को संभाले, एक आशा के सहारे।
फिर रही सरिता दसों–दिशि, निज तृषित आंचल पसारे।
खो कहीं अस्तित्व देंगे, प्राण पाराकर पाकर। जल रहा.....

अश्रु ही प्यारे उन्हें, जिनको न विधि मुस्कान देता।
शाप ही लेते संजो, जिनको न विधि वरदान देता।
मन नहीं फूला समाता, स्नेह की मनुहार पाकर। जल रहा.....

हो भले ही या न हो, पूजन कभी स्वीकार मेरा।
छीन सकता कौन है पर, अर्चना अधिकार मेरा।
साध कुछ बाकी नहीं, यह अमर अधिकार पाकर। जल रहा.....

अपनी बात

हम शाखाओं में, शिविरों में गाते हैं –

मेरे साथी! आने के पहले संघ की इक बात समझ ले।
सौदा यहाँ है मौत का जिन्दगी चुका के।।

क्या संघ में मौत ही मिलती है जिन्दगी के बदले? सांसारिक उलझनों भरी मायावी जिन्दगी का रूप बदलकर कर्तव्य पथ पर चलने वाला जीवन बन जाता है। उस मायावी जीवन का अन्त हो जाता है जिसकी उलझनों के कारण व्यक्ति अपने कर्तव्य पथ से दूर बना रहता है। कर्तव्य पथ पर चलना परमार्थ पथ पर चलना है। इसीलिए जीवन को सार्थक बनाने की राह पर चलते हुए गा उठते हैं–

सीखा है मरने का पाठ जब से, जीना मुझे तो आ गया।

जीव मात्र की यात्रा अपने उद्‌गम अस्तित्व परमेश्वर की ओर ही बनी रहती है। परन्तु सांसारिक माया में उलझकर कदम अटक जाते हैं। परमेश्वर की ओर बढने में ही जीवन की सार्थकता है अत: उस यात्रा से कदमों को रोकने वाली मायावी उलझनों से पार होना अत्यन्त आवश्यक है। यह नियंत्रण साधना मांगता है और साधना कठिन होती ही है, इसीलिए कहा है–सौदा जहाँ है मौत का जिन्दगी चुका के। कबीर ने भी कहा था–

जो घर बारे आपना चले हमारे संग।

कबीर से शिक्षा लेने हेतु, उसका शिष्य बनने हेतु घर जलाकर आने की बात है। यहाँ घर को जलाया नहीं जाता, जलाना उन्हीं मायावी उलझनों को है जो साधना के मार्ग में अवरोध बनकर खड़ी हैं। अपनी मायावी कामनाओं को भष्मीभूत करना ही घर जलाना है। किसी प्राप्त महापुरुष की शरण में जाते हैं तो वो ही इन मायावी कामनाओं का संहारक बनता है। भिन्न–भिन्न प्रयासों से धीरे–धीरे उसका जीवन बदला जाता है। पूरी सार–संभाल रखनी पड़ती है। जैसे एक माली अपने पौधे को संभालता है। पानी सींचता है, खाद भी देता है। सूरज की किरणें उस तक पहुँचती रहे। पानी ज्यादा न हो जाए, पानी कम न रह जाए। ज्यादा तेज धूप न हो इसकी भी व्यवस्था वह करता है। इसी प्रकार महापुरुष या कहें गुरु भी पूरी व्यवस्था करता है ताकि उस शिष्य का जीवन निखार पाता रहे।

श्री क्षत्रिय युवक संघ की पूरी व्यवस्था भी ऐसी बनाई गई है जिसमें संहारने तथा सम्भालने दोनों तरह के कार्य व्यवस्थित होते रहते हैं। एक कुम्हार जैसे घड़ा बनाता है तो बाहर से चोट की थपकी मारता है और भीतर से संभालता है। एक हाथ से चोट करता है तो एक हाथ से संभालता है। चोट मारने और संभालने की क्रिया को कोई अगर कहे कि यह क्या पागलपन है? चोट मारनी है तो अच्छी तरह मार लो, संभालो क्यों? और अगर संभालना है तो चोट ही क्यों मारी जाए। लेकिन घड़ा ऐसे ही निर्मित होता है–एक तरफ से चोट तो एक हाथ से संभालना।

संघ चोट भी बहुत करता है और जितनी चोट करता है उतना ही संभालता है। जिस पर जितनी चोट करता है उसको उतना ही संभालता है। असल में जो चोट खाने का हकदार हो गया वह संभाले जाने का भी हकदार हो गया। इसलिए संघ की अथवा गुरु की चोट खाकर तो लोग धन्य भागी बनते हैं। जो नासमझ हैं वे चूक जाते हैं और अलग हो जाते हैं। जो समझदार हैं वे चोट खाकर और अधिक दृढता से रुक जाते हैं क्योंकि यह आशा बन गई है कि अब कुछ और अधिक संभाल के माध्यम से जीवन निखरेगा। संघ ने, गुरु ने ध्यान जो दिया है। परन्तु जो चोट से ही डरते हैं, वे भाग छूटते हैं। अत्यन्त छोटी–छोटी चोटों से, बातों से ही मार्ग से हट जाते हैं। कर्तव्य तथ पर चलकर परमेश्वर को खोजने चले थे और सहन नहीं कर सकते छोटी–सी चोट, तो भाग छूटते हैं।

साधना का मार्ग सभी प्रकार के कष्टों से भरा पड़ा है। पर कुछ लोग साधना के मार्ग पर चल तो पड़ते हैं, पर उनको कुछ विशिष्टता चाहिए, विशेष व्यवस्था चाहिए। अहंकार ऐसे सूक्ष्म रास्तों में उन पर हावी हो जाता है कि पता ही नहीं चलता। बनते-बनते बात बिगड़ जाती है। घड़ा बनने के करीब हो, थोड़ी चोटें और खानी रह गई हों, उस समय भी वह अहंकार पथ से किनारा करवा डालता है। घड़ा करीब-करीब बन गया है पर वह अभी कच्चा है। अभी मिट्टी की स्थिति में ही है, वर्षा का एक झौंका लगा कि मिट्टी मिट्टी में ही मिल जाती है। आग में पकने का मौका आ रहा है, तभी पथ से भटक जाते हैं। संघ या गुरु कोई सांत्वना देने को नहीं है। वह तो संक्राति देने को है। साधक को निखारना है तो कठोर भी होना पड़ता है। कठोरता सहन कर सके ऐसा प्रयास संघ करता ही है पर जो कंटीले मार्ग पर चल ही नहीं सकते वे मार्ग से दूर हो जाते हैं। पर जो बराबर हर चोट सहकर प्रसन्न होता है, अधिक तत्परता से, लगन से कर्मरत होता जाता है, वह अवश्य गायेगा- सीखा है मरने का पाठ जब से जीना मुझे तो आ गया। ●

पृष्ठ 4 का शेष

समाचार संक्षेप

दीपावली स्नेह मिलन :

दीपावली के अवसर पर परस्पर मिलने की हमारी परम्परा रही है। इसी उपलक्ष में स्नेह-मिलनों का आयोजन जगह-जगह होता रहता है। जैसलमेर जिले में कांसाऊ तेजमालता स्थित वीर सपूत रामसिंह पंचाणोत की छतरी पर पाँच गाँवों के लोग स्नेह-मिलन में आए। शेरगढ क्षेत्र के सेखाला में, मल्लिनाथ राजपूत छात्रावास सिणधरी, नारायण निकेतन बीकानेर, ऊण गाँव (जालोर), बींजा बालाजी धाम, बूठ (गुड़ामालाणी), पाटोदी (बालोतरा) में स्नेह मिलन व दीपोत्सव सम्पन हुए। गुजरात में काणेटी, खोड़ा, रासम, शिहोर, गांधीनगर, गेपपरा, पीपण, वडोद, मंगलपुर, मोडासा, गोहिलशेरी (साणन्द) आदि अनेक शाखाओं में दीपोत्सव सम्पन्न हुआ। राजपूत छात्रावास केकड़ी में स्नेह-मिलन कार्यक्रम सम्पन्न हुआ।

अन्य समाचार :

संघप्रमुख श्री लक्ष्मणसिंह जी के सानिध्य में अहमदाबाद में एक बैठक आयोजित हुई जिसमें अहमदाबाद की राजपूत संस्थाओं के प्रतिनिधि सम्मिलित हुए। संघप्रमुखश्री ने कहा कि हम नियमित परस्पर संवाद करते रहेंगे तो सहयोग बना रहेगा और सामाजिक शक्ति उभरेगी।

उदयपुर में दो दिवसीय वैश्विक क्षत्रिय सम्मेलन सम्पन्न हुआ। अनेक प्रमुख व्यक्तियों ने अपने विचार समाज के सम्बन्ध में रखे। संस्कृति व संस्कार क्षत्रिय की पहचान है अत: इनके संवारने के प्रयास हों।

बनारस हिन्दु विश्वविद्यालय में एक दिवसीय संगोष्ठी 16 अक्टूबर को श्री क्षत्रिय युवक संघ की तरफ से सम्पन हुई। इसमें श्री क्षत्रिय युवक संघ का परिचय विस्तार से दिया गया। सामुहिक संस्कारमयी कर्म प्रणाली समझाई गई। सहयोगियों ने चर्चा के दौरान बनारस में भी श्री क्षत्रिय युवक संघ के कार्य को शीघ्र प्रारम्भ करने की आवश्यकता जताई।

शेखावाटी संभाग की संघ की कार्ययोजना सीकर में आयोजित बैठक में सम्पन्न हुई। संघप्रमुखश्री के सानिध्य में संभागीय कार्ययोजना तैयार की गई।

राजपूत अधिवक्ता संघ का दीपावली स्नेह-मिलन जोधपुर में आयोजित हुआ। सेवा का भाव रखते हुए जरूरतमंदों की सहायता करने पर विचार हुआ। ●

शिविर सूचना

यह सूचित करते हुए अत्यन्त हर्ष है कि श्री क्षत्रिय युवक संघ के आगामी प्रशिक्षण शिविर निम्न प्रकार से होने जा रहे हैं –

क्र.सं.	शिविर	समय	स्थान, मार्ग आदि
01.	प्रा.प्र.शि.	25.12.2024 से 28.12.2024	रानियावास नायला, आगरा रोड़, जयपुर सम्पर्क सूत्र– राजवीरसिंह नायला, राजेद्रसिंह रानियावास
02.	मा.प्र.शि.	25.12.2024 से 31.12.2024	आदर्श स्कूल देचू (जोधपुर संभाग) इस शिविर में कम से कम दो प्राथमिक प्रशिक्षण शिविर किए हुए स्वयंसेवक ही भाग ले सकेंगे।
03.	मा.प्र.शि.	25.12.2024 से 31.12.2024	आदर्श महाविद्यालय देऊ फांटा (नागौर फलोदी रोड़ पर स्थित) नागौर से प्रति घण्टे कृषि मंडी से बस। खींवसर से सीधे बस। नोखा से पांचौड़ी उतर कर आ सकते हैं। जोधपुर से आने वाले खींवसर या नागौर उतरकर पहुँच सकते हैं। ओसियां, बापीणी, फलोदी, लोहावट, जैसलमेर से सीधी बसे हैं। बीकानेर से आने वाले गोगेलाव या नागौर उतरकर पहुँचे। शेखावाटी, जयपुर, डीडवाना, लाडनू, कुचामन, मेड़ता, डेगाना से नागौर आकर बस कृषि मंडी से पकड़ें। सम्पर्क सूत्र– ओंकारसिंह देऊ–9828580440 विक्रमसिंह देऊ–8769014184
04.	मा.प्र.शि.	25.12.2024 से 31.12.2024	मारूड़ी (बाड़मेर)
05.	मा.प्र.शि.	25.12.2024 से 31.12.2024	रायसर (बीकानेर)
06.	मा.प्र.शि.	25.12.2024 से 31.12.2024	बेरसियाला (जिला–जैसलमेर)
07.	प्रा.प्र.शि. (बालिका)	26.12.2024 से 29.12.2024	जयमल कोट (पुष्कर)
08.	मा.प्र.शि.	30.12.2024 से 5.01.2025	राजपूत समाज धर्मशाला, रामदेव मंदिर परिसर कचनारा (नाहरगढ) मंदसौर (मध्यप्रदेश) मंदसौर से नाहरगढ रूपणी बिशनिया जाने वाली सड़क पर रामदेव मंदिर कचनारा उतरें।
09.	मा.प्र.शि.	11.01.2025 से 15.01.2025	हैदराबाद (तेलंगाना)

प्रत्येक मा.प्र.शि. में कम से कम दो प्राथमिक प्रशिक्षण शिविर किए हुए स्वयंसेवक ही भाग ले सकेंगे।

शीतकालीन छुट्टियों का समय इस वर्ष बदलने की चर्चा है। अगर बदली गई तो माध्यमिक प्र.शि. का समय भी उसी के अनुसार हो जाएगा।

गजेन्द्र सिंह आऊ

शिविर कार्यालय प्रमुख (श्री क्षत्रिय युवक संघ)

स्वच्छ भारत
एक कदम स्वच्छता की ओर
SS KIRTEE
AN ISO 9001 : 2015 CERTIFIED COMPANY
Piping is Our Business Satisfaction is Our Goal
17425
CML-8600120461
IS:12786
CML-8600120457
IS:4984
CML-8600120464
Mr. Surendra Singh Shekhawat
Director
Shree Ganesh Enterprises
Manufacture Of:-
SS KIRTEE BRAND ISI HDPE Sprinkler Pipe
Mini Sprinkler System | HDPE Pipes & Coils For Water
SHREE GANESH ENTERPRISES
Khasra No. 315/6, 317,318, RIICO Road, Prasrampura, SKS Industrial Area
Reengus, Sikar (Rajasthan)
8209398951 surendrasinghshekhawat234@gmail.com
GANESH
HOTEL
Ganesh Singh Maharoli
Datar Singh Maharoli
Opp. Polovictory Cinema. Station Raod, Jaipur | Contact No. 9929105156

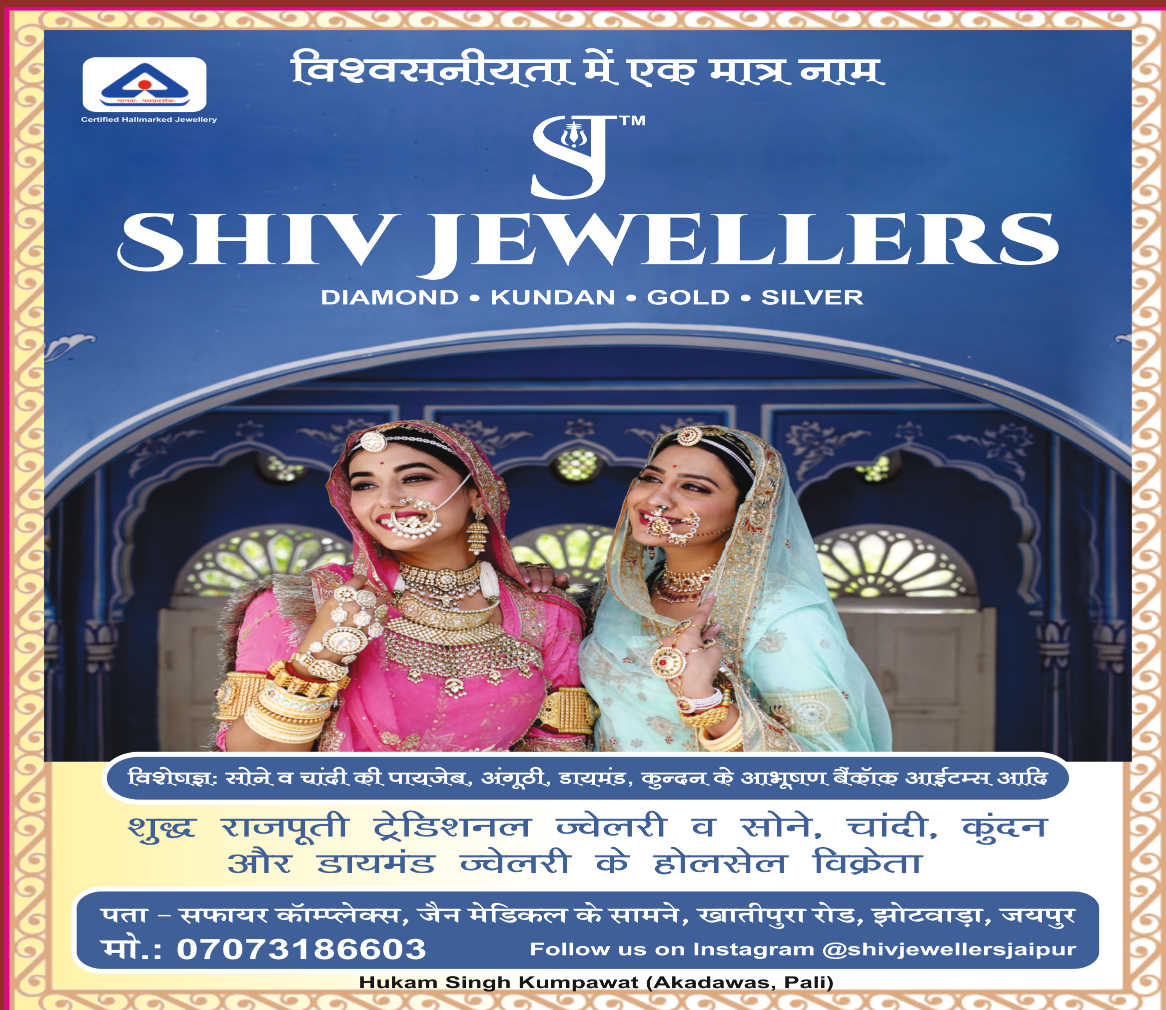

दिसम्बर, सन् 2024
वर्ष : 61, अंक : 12

समाचार पत्र पंजी.संख्या R.N.7127/60
डाक पंजीयन संख्या - Jaipur City /411/2023-25

संघशक्ति

ए-8, तारानगर, झोटवाड़ा,
जयपुर-302012
दूरभाष : 0141-2466353

E-mail : sanghshakti@gmail.com
Website : www.shrikys.org

श्रीमान्...

....

....

श्री संघशक्तिप्रकाशन प्रन्यास (स्वत्वाधिकारी) के लिए मुद्रक एवं प्रकाशक राजेन्द्र सिंह राठौड़ द्वारा भास्कर प्रिंटिंग प्रेस, डी बी कोर्प लिमिटेड, प्लोट नंबर-01, मंगलम कनक वाटिका के पीछे, प्रधानमंत्री ग्राम सड़क योजना, रेल्वे क्रोसिंग के पास, बिलवा, शिवदासपुरा, टोंक रोड, जयपुर (राजस्थान)-303903 (दूरभाष -6658888) से मुद्रित एवं ए-8, तारानगर, झोटवाड़ा, जयपुर- 302012 (दूरभाष- 2466353) से प्रकाशित। संपादक राजेंद्र सिंह राठौड़। Email : sanghshakti@gmail-com | Website : www-shrikys-org